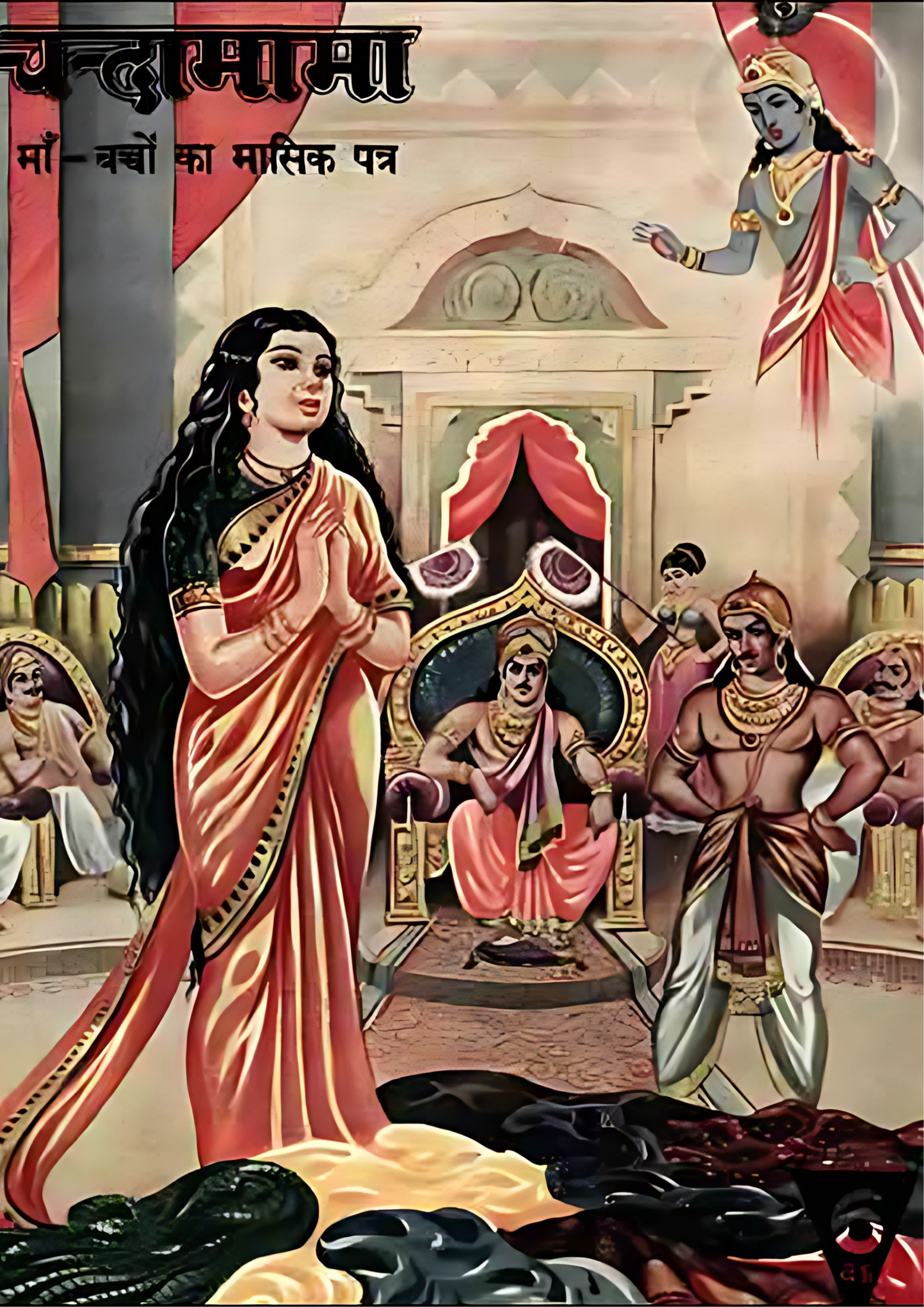
चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





वत्स देश के राजा उदयन ने अपने मन्त्री यौगन्धराय की सहायता से उज्जयिनी की राजकुमारी वासवदत्ता से विवाह कर लिया। वासवदत्ता बहुत ही सुन्दर थी। उदयन को राज्य कार्य में दिलचस्पी न थी। उसको पहिले से ही सङ्गीत और शिकार का व्यसन था। और अब वासवदत्ता ने उसका मन पूरी तरह आकर्षित कर लिया था। राजा ने सारा राज्य भार यौगन्धराय और सेनापति रुमण्वन्त पर छोड़ दिया और स्वयं वासवदत्ता के साथ शिकार, और अनेक मोग-विलासों में मस्त रहने लगा।

उदयन के पुरखे पाँडव थे। कभी चन्द्रवंश के राजा हस्तिनापुर को अपनी राजधानी बना सारे भारत में राज्य करते थे। परन्तु उदयन के समय के आते आते साम्राज्य सब समाप्त हो चुका था। केवल वत्स देश मात्र ही रह गया था। यौगन्धराय को डर था, यदि राजा को भोग-विलास के जीवन से विरक्त न किया गया, तो बचा- खुचा राज्य भी खतम हो जायेगा। उसने एक दिन रुमण्वन्त को बुलाकर उसके सामने अपना भय व्यक्त किया।

यौगन्धराय ने उससे पहले ही एक चाल सोच रखी थी। उदयन के शत्रुओं में मगध राज्य का प्रद्योत भी था। मगधराज्य वत्स राज्य से सटा ही था। अगर प्रद्योत को साथ मिला लिया गया तो उदयन के साम्राज्य के विस्तृत होने की गुञ्जाइश थी। प्रद्योत की एक लड़की थी, जिसका नाम पद्मावती था। वह बहुत ही सुन्दर और सुगुणवती थी। यौगन्धराय ने सोचा, यदि जैसे तैसे उसका विवाह उदयन से कर दिया गया, तो उसकी चाल चल सकती थी।

कुमारी आशा ओहरी



यौगन्धराय ने मगध के राजा के पास खबर भिजवाई कि वे अपनी राजकुमारी का उदयन से विवाह करें। मगध राजा ने न माना। "मैं उस व्यक्ति को अपनी लड़की विवाह में कैसे दे सकता हूँ, जिसको सिवाय बासवदत्ता के, किसी और की फिक्र ही नहीं है।" मगध के राजा ने पूछा। जबतक बासवदत्ता उसके साथ है, उदयन किसी और के साथ शादी नहीं करेगा। अगर उसका साम्राज्य बढ़ाना है, तो यह ज़रूरी है कि उसका मन वासवदत्ता पर से हटाया याय।

उसके लिये भी यौगन्धराय ने एक उपाय सोचा। जब राजा दूर कहीं गया हो, उसके सामने यह साबित किया जाय कि वासवदत्ता की मृत्यु हो गई है और मौका पा उसको पद्मावती से शादी करने के लिये मनाया जाय। जबतक विवाह नहीं होता है, तब तक वासवदत्ता को कहीं छुपाया जा सकता है।

रुमण्वन्त ने यह उपाय सुना तो वह अचरज में पड़ गया।

"अगर वासवदत्ता मर गई तो हो सकता है कि उदयन पागल ही हो जाय। वह शोक मैं मर भी सकता है। फिर इस उपाय के लिये वासवदत्ता की स्वीकृति भी आवश्यक है। अच्छा होगा, अगर उसके बड़े भाई गोपालक से भी सारी बात सच सच कह दी जाय।" रुमण्वन्त ने सलाह दी।

यौगन्धराय ने वचन दिया कि वह किसी का भी बाल बाँका न होने देगा। वह अपने काम पर लग गया। उसने गोपालक को बुलवाया। उससे बातचीत कर उसको अपनी तरफ कर लिया। अगले दिन यौगन्धराय ने राजा उदयन के पास जाकर कहा-"महाराज! हम लावाणक चलें। वह हमारे राज्य की सीमा पर है। बहुत ही

अच्छी जगह है। वह शिकार के लिये भी बड़ा उपयोगी प्रदेश है। यही नहीं, यहाँ के लोगों को मगध का राजा तङ्ग कर रहा है। उनकी पूछताछ करना हमारा कर्तव्य है।"

उदयन, वासवदत्ता, गोपालक, नौकर-चाकरों के साथ लावाणक के लिये रवाना हुआ। यौगन्धराय, वसन्तक भी साथ गये। जब से उदयन वहाँ पहुँचा, तब से वह शिकार में मस्त रहने लगा।



एक दिन जब उदयन शिकार खेलता खेलता बहुत दूर चला गया, तब यौगन्धराय ने वासवदत्ता के पास जा अपनी चाल के बारे में कहा। वासवदत्ता को यह बहुत मुश्किल लगा कि वह ऐसा अभिनय करे, मानों वह मर गई हो। वह पति वियोग भी न सहना चाहती थी। परन्तु चूँकि यौगन्धराय को वह अपना गुरु मानती थी, और उसके पति को नया साम्राज्य मिलता था, इसलिये उसने यौगन्धराय की बात मान ली।

यौगन्धराय ने वासवदत्ता से ब्राह्मणी का वेष पहनने के लिये कहा। वसन्तक को काना ब्रह्मचारी बनाया। स्वयं उसने एक बूढ़े ब्राह्मण का वेष धरा। तब तीना ने सीमा पारकर मगध राज्य की ओर चल दिया। उनके जाते ही रुमण्वन्त ने उस घर में आग लगा दी, जहाँ वासवदत्ता रहा करती थी। जब तक पाँच-दस आदमी इकट्ठे हुये तो घर राख हो चुका था। तब रुमण्वन्त ने दुःख के साथ कहा कि वासवदत्ता देवी और बसन्तक घर में जल गये हैं। सब रोने- धोने लगे। जब शिकार खेलकर उदयन वापिस आया, तो यह खबर सुनते ही वह मूर्छित हो गया। पर जब उसने वासवदत्ता के भाई गोपालक को मृत्यु वार्ता सुन अधिक दुःखी न पाया, तो वह भी अपने दुःख को छुपाने लगा।



इस बीच में वेष बदलकर यौगन्धराय, वासवदत्ता, वसन्तक, राजमहल के बगीचे में जाकर वहाँ राजकुमारी पद्मावती से मिले।

उससे यौगन्धराय ने यों कहा-"माँ जी! यह मेरी लड़की अवन्तिका है। इसका पति बुरी आदतों में पड़ इसको छोड़कर कहीं चला गया है। मैं उसको खोजने जा रहा हूँ। जब तक मैं वापिस न आ जाऊँ, तब तक मेहरबानी करके मेरी लड़की को अपने आश्रय में रखकर पुण्य कमाइये। मेरा लड़का भी उसके साथ रहेगा।"

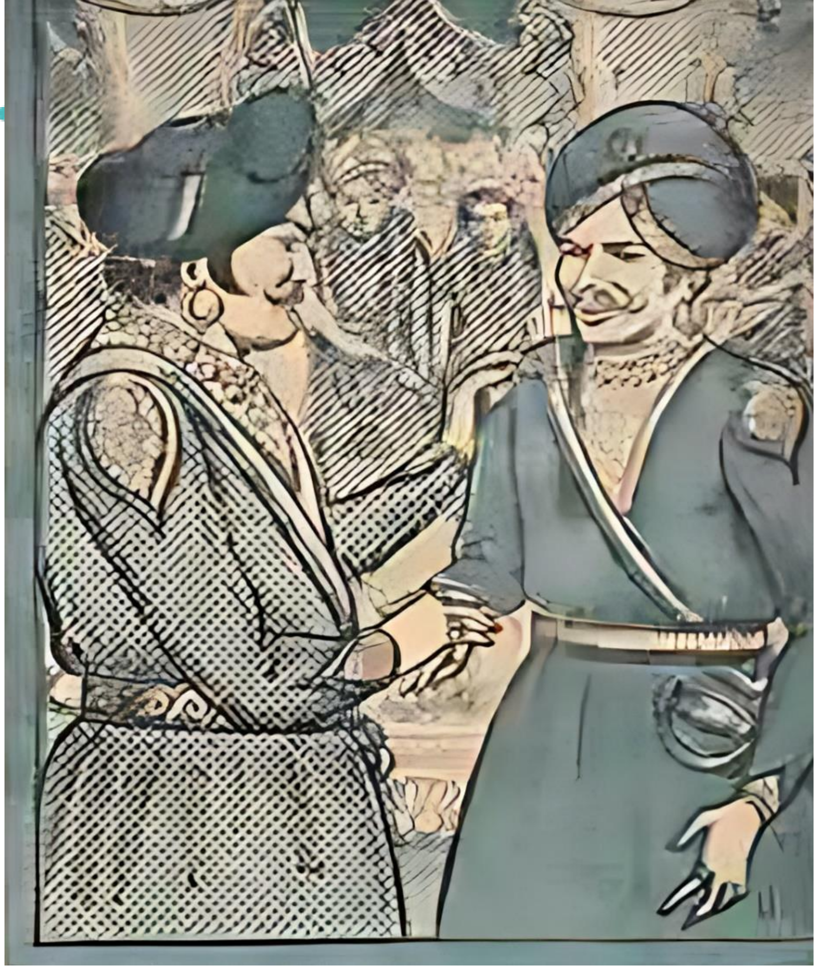
वासवदत्ता दुःख के मारे बिह्वल थी। उसके सौन्दर्य को देखते ही पद्मावती का हृदय पिघल गया।

वासवदत्ता को आश्रय देने के लिये पद्मावती ने मान लिया। अपना काम कर यौगन्धराय चला गया।

वासवदत्ता वसन्तक को लेकर पद्मावती के साथ अन्तःपुर में गई। उसका मन पति के वियोग में जलने लगा। परन्तु जब उसने सीता का चित्र अन्तःपुर में देखा, तो उसने अपने को यह कहकर आश्वासन दिया कि उस महा माता के वियोग के सामने उसका भी कोई वियोग है!

कुछ दिनों बाद यौगन्धराय ने मगध के राजा के पास खबर भिजवाई- "जब से लावाणक में बासवदत्ता की मृत्यु हुई है, तब से हमारा राजा शोक-सागर में डूबा हुआ है। उसका शोक दूर करने के लिये आप अपनी लड़की पद्मावती का उनके साथ विवाह करवाइये।"

इस बार मगध के राजा ने यौगन्धराय के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। उसको गर्व भी हुआ कि उदयन उसका दामाद होने जा रहा है। एक सप्ताह के भीतर



विवाह के लिये शुभ मुहूर्त भी निश्चित कर दिया। यह बात सुनते ही पद्मावती के सन्तोष की सीमा न थी, न वासवदत्ता के दुःख की ही। वसन्तक ने वासवदत्ता को दिलासा दिलाया-"देवी! शोक मत करो! इस विवाह से एक शत्रु मित्र बन जायेगा। और अगर महाराज के बारे में पूछती हो तो उनका प्रेम तुम्हारे लिये न कभी कम होगा, न बदलेगा ही।"

ठीक मुहूर्त के समय उदयन का बड़े धूमधाम से विवाह हुआ। जब अग्नि के सामने उदयन और पद्मावती का विवाह हो रहा था, तब यौगन्धराय ने मगध राजा से अग्नि की साक्षी में पथ करवाई कि वह वत्सदेश से हमेशा मैत्री रखेगा। राजमहल जगमगा रहा था। खुशियाँ मनाई जा रही थीं। परन्तु वासवदत्ता किसी कोने में छुप विवाह के यथाविधि होने में बिघ्न न डाल रही थी।

विवाह होते ही उदयन अपनी नई पत्नी के साथ लावाणक वापिस आ गया। पद्मावती के नौकर-चाकरों के साथ वासवदत्ता भी पीछे पीछे चली आई। वत्सदेश के राजा उदयन ने पद्मावती से विवाह तो कर लिया था, पर वह एक क्षण भी वासवदत्ता को न भूल पाया था। पति की मनःस्थिति का अनुमान कर वासवदत्ता ने पद्मावती को उसी तरह सजाया; उसी तरह टीका लगाया, जिस प्रकार वह स्वयं लगाती थी। उसको पति के पास भेजकर वह गोपलक के पास गई। भाई-बहिन एक दूसरे को आलिङ्गन कर रोये। उस समय यौगन्धराय, रुमण्वन्त आदि जो भी आया, उसकी आँखों से आसू बहने लगे, और इधर अपनी नई पत्नी के फूल, टीका वगैरह देखकर राजा आश्चर्य में पड़ गया।

"तेरा शृङ्गार किसने किया है?" उदयन ने पूछा।

पद्मावती ने आश्चर्य के साथ जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

"एक बूढ़ा ब्राह्मण अवन्तिका नाम की लड़की को मेरी शरण में लाया था। वह बहुत ही अच्छी और चतुर है। उसी ने आज स्वयं मेरा शृंगार किया है।"

"वह कहाँ है?" राजा ने पूछा।

पद्मावती ने जब अपनी सहेलियों को भेजकर उसको बुलवाया, तब उन्होंने कहा-"वह यहाँ नहीं हैं। गोपालक महाराज के घर गई हुई है।"

"वहाँ क्यों गई है! जाओ, उससे जल्दी जाकर कहो कि मैंने बुलाया है" पद्मावती ने आज्ञा दी।

जब राजा ने यह सुना कि अवन्तिका गोपालक के घर गई हुई है, तो उसका सन्देह और बढ़ गया। उसने गोपालक के घर स्वयं जा वासवदत्ता को देखा। उसके आनन्द की सीमा न थी।

यौगन्धराय ने राजा से क्षमा माँगते हुये कहा-"महाराज ! यह सब मेरी ही करनी है। आपका राज्य विस्तृत करने के लिये और मगध के राजा के साथ मैत्री करवाने के लिये ही मैंने यह विवाह करवाया था।"

"वैसा मत कहिये। जब मैंने राज्य-भार छोड़ दिया था, तब आपने राज्य को देखा-भाला। उसको नाश से बचाया, उस कार्य के लिये मैं आपका कृतज्ञ हूँ।" वत्सदेश के राजा ने कहा।

वासवदत्ता के मिलने पर वत्स के राजा उदयन को पद्मावती की उदारता भी समझ में आई। वह दोनों पत्नियों को समान रूप से प्रेम करता, सुख से रहने लगा।





एक बार एक व्यापारी, दूर देश में व्यापार के लिये जाता जाता साँझ के समय एक गाँव में पहुँचा। उसने उस गाँव में रात बितानी चाही। जब वह घोड़े पर गाँव की और जा रहा था तो एक आदमी ने सामने आकर कहा- "बाबू जी! चार आने दिल्वाइये। मुझे अफीम की आदत है। दो दिन से मेरे पास एक पैसा भी नहीं है।" उसे चार आने दे व्यापारी गाँव में घुसा।

एक घर के सामने वह घोड़े से उतरा, और घर के मालिक के पास जा, वहाँ रात बिताने की अनुमति माँगी। घर के मालिक ने इजाजत दे दी।

व्यापारी ने घर के आँगन में गढ़ी लकड़ी की खूँटी से अपना घोड़ा बाँध दिया, और रात भर वहीं रहा। जब सवेरे उठ व्यापारी ने आगे जाना चाहा, तब उसने देखा कि उसका घोड़ा खोलकर घर का मालिक आगे आगे कहीं जा रहा था।

"बाबू ! मैं अब जानेवाला हूँ। मेहरबानी करके मेरा घोड़ा कहीं न ले जाइये।" व्यापारी ने जोर से कहा।

तब घर के मालिक ने अचम्भे में कहा-"यह घोड़ा मेरा है। मेरे आङ्गन में गढ़ी लकड़ी की खूँटी रोज एक घोड़े को जन्म देती है।"

"बाबू ! आप मेरा घोड़ा चुराने के लिये चाल चल रहे हैं। यह अच्छा नहीं है।" व्यापारी ने कहा।

"अगर तुझे मेरी बात पर यकीन न हो, तो इस गाँव में चाहे तू किसी से पूछ ले। सबको मालूम है कि रोज़ हमारे घर की खूँटी एक घोड़े को जन्म देती है।" घर के मालिक ने कहा।

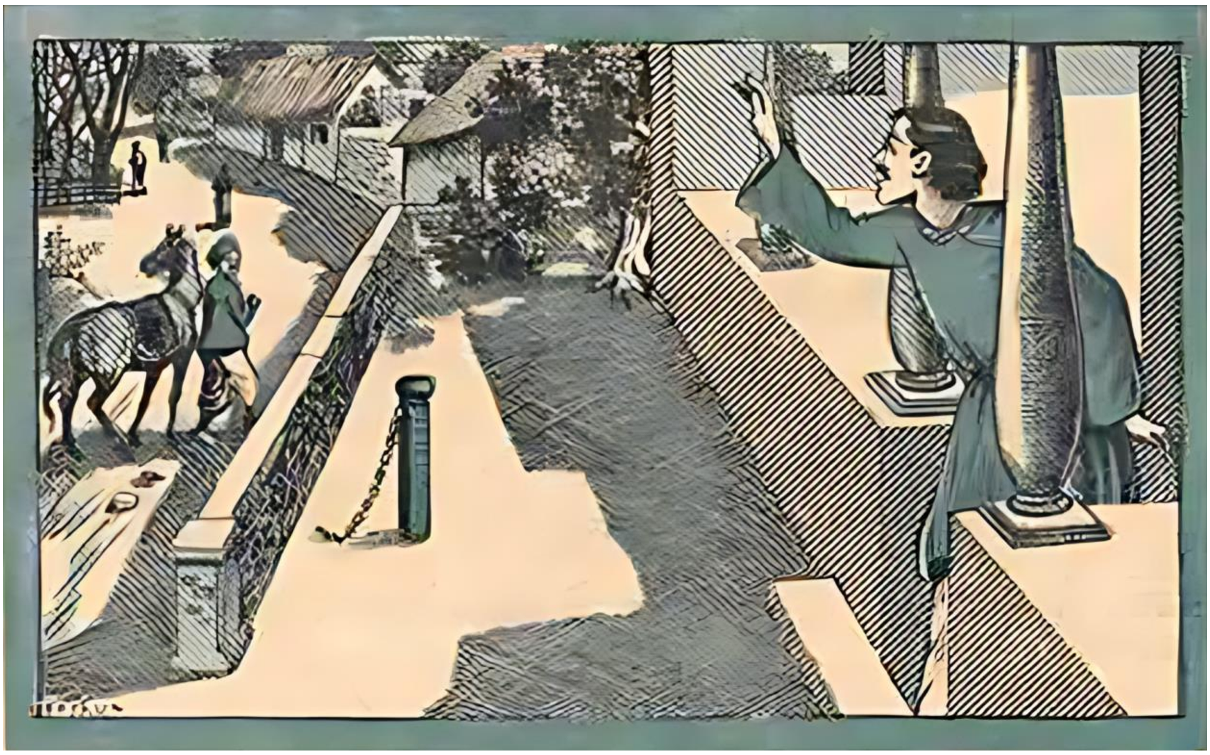
सुबोध कुमार

वह आदमी पक्का चोर था। उस गाँव में बहुत से उसके जैसे ही थे। अगर कभी भूला-भटका कोई परदेशी आता तो सब मिलकर उसे ठगा करते। इसलिये सब ने घर के मालिक की बात में बात मिलायी। व्यापारी और कुछ कर नहीं सकता था। लाचार हो उसने गाँव के पटवारी से घर के मालिक के बारे में शिकायत की। पटवारी ने घर के मालिक को बुलाकर पूछताछ की। "जी हुजूर! हमारे घर में लकड़ी की खूँटी रोज़ एक घोड़े को जन्म देती है। अगर जरूरत हो तो दसियों से गवाही दिलवा दूँ।" घर के मालिक ने कहा।

"क्यों भाई ! क्या तेरे पास कोई गवाह है, जो यह कहे कि यह घोड़ा तेरा ही है। अगर हो तो बुला ला।" पटवारी ने व्यापारी से कहा।

व्यापारी को उस आदमी की याद आयी, जिसने उससे अफीम के लिये चार आने पिछली साझ को माँगे थे। वह उसकी खोज में निकल पड़ा। इस बीच में घर का मालिक भी अपने गवाह इकट्ठे करने लगा।

वह आदमी, जिसने व्यापारी से चार आने लिये थे, अफीम के नशे में था।



उसने उसको मुश्किल से उठाया और उससे जो उस पर गुजरी थी, कह सुनाई। यह सुनते ही अफ़ीमची व्यापारी के साथ पटवारी के पास आया।

तब घर का मालिक एक एक करके अपने गवाहों से पटवारी के सामने यह साक्षी दिला रहा था कि रोज उसके घर की खूँटी एक एक घोड़े को जन्म देती थी। अफ्रीमची को देखते ही घर के मालिक के एक गवाह ने ठट्टा मारकर कहा-"ढूँढ ढाँढ कर इस अफ़ीमची को ही गवाह बनाकर लाये हो? इसकी बात पर कौन विश्वास करेगा?" व्यापारी को देखकर उसका वे परिहास करने लगे।

नशा अभी गया न था। अङ्गड़ाइयाँ लेते हुये अफ़ीमची को देखकर पटवारी ने कहा-"तू तो अच्छे नशे में नज़र आता है। तब भला तेरी साक्षी कैसे ली जाय?"

तब अफ़ीमची ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा-"महाराज! मैं नशे में नहीं हूँ। रात भर तालाब के नीचे आग जला मछलियों को पका रहा था। एक पल भी न सो सका।"

इस बात पर सब के साथ पटवारी भी हँसा। "तेरी गवाही ऊटपटाँग हैं, यह तो तेरी बातें ही साबित कर रही हैं। तालाब के नीचे भला कोई आग जलाता है?" पटवारी ने हँसकर पूछा।

आप यह क्या कह रहे हैं? जब लकड़ी की खूँटी से घोड़े का जन्म देना सम्भव है, तो क्या तालाब के नीचे आग जलाना असम्भव है? क्या मेरी ऊटपटाँग गवाही है?" अफ़ीमची ने पूछा।

यह बात सुन पटवारी को शर्म आयी। उसने घर के मालिक को डराया धमकाया, और व्यापारी का घोड़ा व्यापारी को वापिस दिलवा दिया।





राजा भोज साहित्य-प्रेमी था। वह पण्डितों और कवियों का विशेषरूप से सम्मान किया करता था। अगर उसे कोई उसके मन पसन्द की कविता सुनाता तो एक एक अक्षर के लिये लाख लाख रुपये दिया करता। इसलिये उसके राज्य में लगभग सभी कवि थे। यहाँ तक कि बच्चे भी पण्डित थे।

अनादिकाल से काशी के पण्डित सारे देश में प्रसिद्ध थे। परन्तु राजा भोज के समय धारानगर के पण्डितों की प्रसिद्धि उनसे अधिक हो गई। ज्यों ज्यों दिन गुज़रते गये, त्यों त्यों काशी पण्डितों को कोई पूछनेवाला भी न रहा।

यह देख काशी के पण्डितों को बहुत गुस्सा आया। उन्होंने एक सभा बुलायी और निश्चय किया कि जब तक काशी के पण्डित धारानगर के पण्डितों को बाद विवाद में नहीं जीत लेंगे, तब तक काशी नगर की प्रतिष्ठा न रह सकेगी। इस काम के लिये उन्होंने चार दिग्गज पण्डितों को चुनकर धारानगर भेजा।

चारों काशी के पण्डित धारानगर पहुँचकर एक मामूली गृहस्थी के घर ठहरे। उस गृहस्थी ने उनका स्वागत किया। गृहस्थी के एक बाहर वर्ष की लड़की थी, और आठ वर्ष का लड़का था।

धारानगर में पण्डितों का काफी सम्मान-सत्कार होता था। परन्तु यहाँ के पण्डित कितने बड़े हैं, और उनको कैसे हराया जाय, यह काशी के पण्डितों को बोध न हो पाया। उनको डर लगा रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि वे ही हार जाये और काशी की बदनामी हो। जब अगले दिन सवेरे नित्य कृत्य से निवृत्त होकर पण्डित बैठे हुये

डी. मञ्जुलता

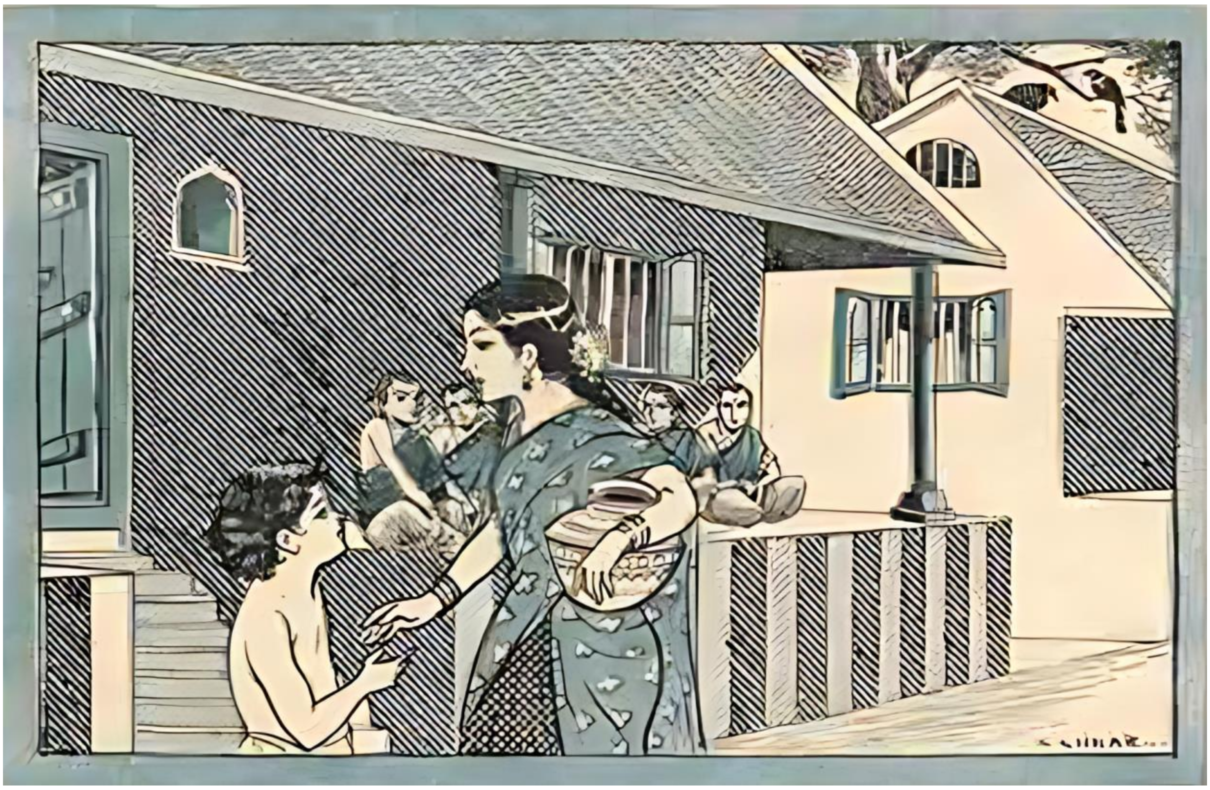
थे, तो एक विचित्र घटना घटी। पेड़ पर बैठे कौवे जोर-जोर से चिल्लाने लगे।

उनका चिल्लाना सुन घर के लड़के ने अपनी बहन से पूछा-"बहन ! सबेरे सवेरे कौवे क्यों चिल्लाते हैं?" घड़ा ले वह पानी लाने जा रही थी। उसने जाते जाते कहा-"हमारे घर में काशी के चार पण्डित है। उनके लिए यह एक छोटा सा प्रश्न है। उनसे पूछना।"

लड़के ने पण्डितों के पास आ विनयपूर्वक पूछा-:महाशयो ! मेरा सन्देह पूरा कीजिये। सवेरे सवेरे कौवे क्यों चिल्लाते है?"

काशी के पण्डित एक दूसरे का मुख ताकने लगे। सच कहा जाय तो वे यह न जानते थे कि कौवे क्यों सवेरे सवेरे चिल्लाते है। उनको कभी बैसा सन्देह हुआ ही न था। इसलिये वे यह भी न जानते थे कि उसका निवारण कैसे किया जाय।

लड़के से कुछ न कुछ तो कहना ही था। इसलिये जो उन्हें सूझा,उन्होंने कह दिया-"सवेरे सवेरे कौवे उठ एक दूसरे को राम राम कहते हैं। आपस में बातचीत करते हैं।" एक पण्डित ने कहा।



"वे तो दिन भर बातें करते रहते हैं, पर सबेरे सबेरे वे एक साथ क्यों चिल्लाते हैं?" लड़के ने पूछा।

"रात खतम हो गई है, इस खुशी में वे चिल्लाते हैं।" एक और पण्डित ने बताया।

"तो दिन भर क्यों नहीं चिल्लाते?" लड़के ने फिर पूछा।

दूसरे पण्डितों ने भी कुछ कहा। पर लड़के को सन्तोष न हुआ।

इस बीच में लड़के की बहिन पानी लेकर वहाँ आई।

"बहन! कम से कम तू तो मेरा सन्देह पूरा करेगी न! सवेरे सवेरे क्यों कौवे शोर करते है?" लड़के ने पूछा।

"काशी के पण्डितों से पूछा कि नहीं?" बहन ने प्रश्न किया।

"लगता है, वे ठीक जवाब नहीं जानते हैं।" भाई ने कहा।

"तो सुन ! मैं बताती हूँ। सूर्य भगवान को अन्धकार का नाश करते हुये आते देख, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें भी वह अन्धेरा समझ नाश कर दे, कौवे चिल्ला चिल्लाकर सूर्य भगवान से कहते हैं-'हम अन्धकार नहीं हैं, हम कौवे हैं।- काँय, काँय!" यह कह बहन घर में चली गई।

लड़का भी अपने सन्देह के निवारण पर खुशी से उछलने-कूदने लगा।

काशी के पण्डित यह सब सुन आश्चर्य से एक दूसरे का मुख देखने लगे।

"मामूली घर के कुँवारी लड़की ही जब इतनी बुद्धिमान है, तब इस देश के पण्डितों के सामने भला हम क्या चीज हैं ?" वे आपस में बातचीत कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे। उसी समय वे काशी के लिये वापिस रवाना हो गये।





समरसेन एक बड़े पत्थर की आड़ में से पीछे की तरफ देखने लगा। उसके साथ के सैनिक भी हथेली में प्राण रख भय से काँप रहे थे। वे डर रहे थे, कहीं ऐसा न हो कि सुरङ्ग में से हाथियों का एक बड़ा झुण्ड निकले और उनको चकनाचूर कर दे। वे एक तङ्ग जगह में फँसे हुये थे। वहाँ से भाग निकलना भी आसान न था। भयभीत सैनिकों को और समरसेन को यकायक दो-तीन व्यक्तियों का आर्तनाद सुनाई दिया। वह आर्तनाद गुफा की परली तरफ से आ रहा था। परन्तु जिस जगह वे खड़े थे, वहाँ से बाहर कैसे निकलें?

जब सब के सब इस उलझन से बाहर निकलने का तरतीब सोच रहे थे, वह हाथी चिंघाड़ता चिंघाड़ता इधर-उधर देखने लगा। फिर जिस गुफा से समरसेन और उसके साथी आये थे, उसमें जा घुसा। थोड़ी देर



उसके जल-प्रपात में से गुजरने की ध्वनि भी सुनाई दी।

पहले पहल समरसेन अपनी जगह से बाहर निकला। उसके बाद सैनिक तुरन्त उसके पीछे आये। रह रह कर गुफा की परली तरफ से आर्तनाद अब भी बहुत साफ सुनाई दे रहा था।

"कोई बड़ी आफत में फँसा हुआ जान पड़ता है।" एक सैनिक ने कहा।

"इसमें तो कोई शक नहीं है। परन्तु हाथी यकायक क्यों उस तरफ से भागकर आया? कहीँ यह दुश्मनों की चाल तो नहीं है ? क्या वह सचमुच आर्तनाद है? नहीं तो..."

समरसेन अभी कह ही रहा था कि गुफा की परली तरफ से बड़ा शोर-शराबा होने लगा।

समरसेन ने सोचा कि अब हिचकिचाने से कोई फायदा नहीं होगा। गुफा के परली तरफवाले, चाहे दुश्मन हो, या दोस्त; खतरनाक हालत में हैं। इसलिये हिम्मत बाँधकर आगे जाकर देखना उसने अपना फर्ज समझा।

समरसेन, सैनिकों को आता देखकर आगे बढ़ा। जब वे तङ्ग गुफा में थोड़ी दूर तक में चले, तो उन्हें गुफा का दरवाजा, और उससे सटा बड़ा-सा तालाब दिखाई दिया। तालाब में कई पेड़ भी थे। पानी बहुत ही स्थिर था।

समरसेन ज्यों ही आगे गया तो उसने तीन आदमियों को घुटने भर पानी में, खम्भों से बँधा देखा। समरसेन को देखते ही वे और भी जोर से चिल्लाने लगे।

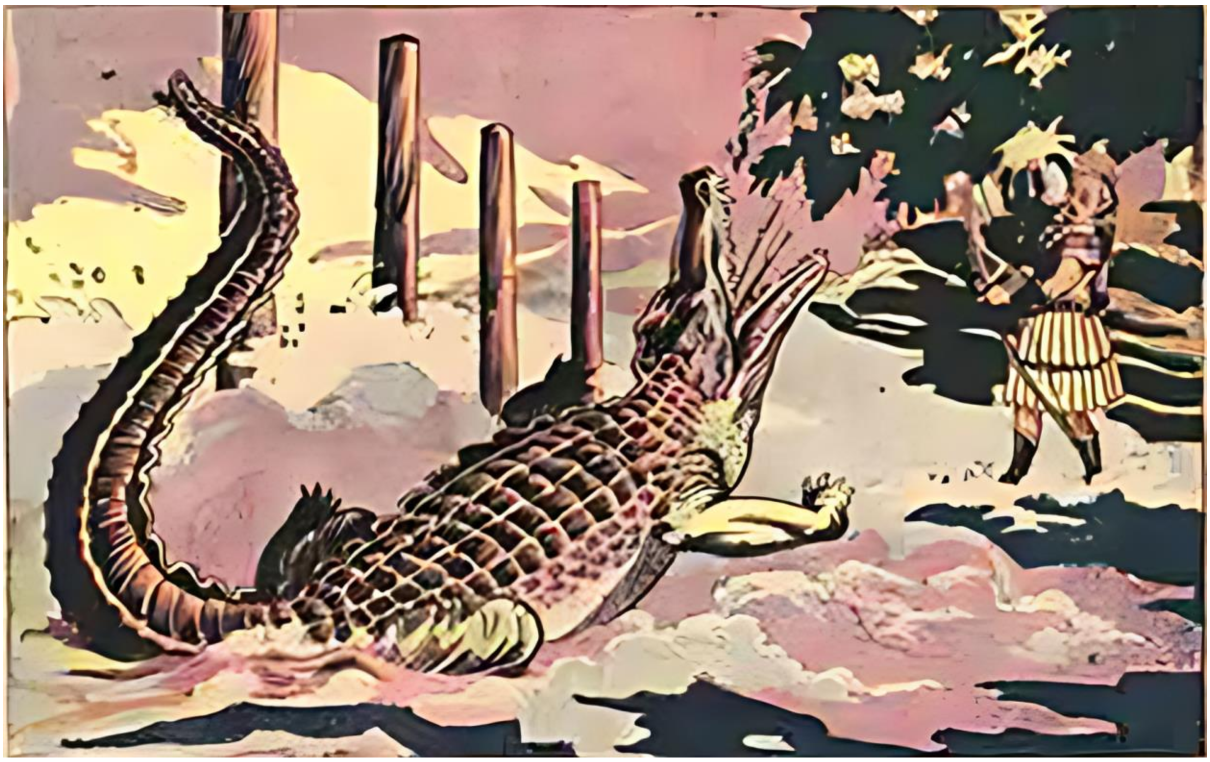
न समरसेन, न सैनिक ही जान पाये कि आखिर मामला क्या था। बँधे हुये आदमियों को तत्क्षण विमुक्त करने में उन्हें कोई खतरा न मालूम हुआ। न उनके

बगल में, न कहीं आस-पास ही कोई था। उन्हें देखकर क्यों वे इतने जोर से चिल्ला रहे थे समरसेन को यह सोच बहुत आश्चर्य हुआ।

बँधे हुये व्यक्तियों के पास जाने के लिये पानी में उतरकर थोड़ी दूर जाना आवश्यक था। पानी गहरा नहीं है, यह वहाँ जमी हुई काई ही बता रही थी। समरसेन ने अपनी तलवार और तरकश सम्भाले, और पानी में उत्तर गया। सैनिक भी उसके पीछे पीछे चलने लगे। उनके पानी में घुसते ही वे तीनों व्यक्ति बहुत बुरी तरह चिल्लाये।

समरसेन आश्चर्य से देख रहा था। सामने एक मगर मुख बाए उसकी तरफ बढ़ा आ रहा था। तब उसको मालूम हुआ कि मामला क्या था। उन व्यक्तियों के भयङ्कर चिल्लाने का कारण यह मगर ही था।

तलवार म्यान में रख, समरसेन ने धनुषः पर बाण चढ़ाया। मगर मुख खोल, दाँत दिखाते दिखाते आगे चला आ रहा था। उसे थोड़ी दूर आने दिया, फिर समरसेन ने उसके नथने का निशाना बना, बाण छोड़ा। बाण की चोट से मगर थोड़ी देर पानी में छटपटाया। फिर पहले की तरह आगे





बढ़ने लगा। उसकी चमकती हुई आँखे डरावनी लगती थी।

इस बार समरसेन ने अपनी तलवार से उसकी रीढ़ पर दो जबरदस्त घाव किये। मगर घाव न सह सका और पानी में तड़प-तड़पकर मरने लगा। भयभीत सैनिकों के पाणों में प्राण आये।

बाद में समरसेन खम्भों से बँधे हुये व्यक्तियों के पास गया। जब समरसेन ने शक्ल देखी तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। वे तीनों उसको व्याघ्रदत के पकड़ने के पूर्व इस गुफा में थे। परन्तु चौथे आदमी का क्या हुआ? समरसेन को देखकर

ये तीनों सैनिक भी आश्चर्य से स्तम्भित रह गये। उनके आनन्द की भी हद न थी। उनके प्राण तो बच ही रहे थे, साथ ही उनको अपना खोया हुआ सरदार भी मिल गया था।

"सरदार! हमने कभी कल्पना भी न की थी कि हम फिर आपको देख पायेंगे।" एक सैनिक ने कहा।

"चौथे सैनिक का क्या हुआ?" समरसेन ने पूछा।

"सरदार! आपने जिस मगर को मारा है, वह उसको जिन्दा निगल गया। अगर आप वक्त पर नहीं आते तो हमारी भी वही हालत हुई होती।" सैनिकों ने बड़े विनय से जवाब दिया। "तुमको किसने यो बाँध रखा है?" समरसेन ने पूछा।

सैनिकों ने जो कुछ गुज़रा था, संक्षेप में कह सुनाया। वे भी अपने सरदार को खोजते हुये गुफा के खुफिया दरवाज़े से इस इलाके में पहुँचे थे। यहाँ व्याघ्रदत्त के सिपाहियों ने उनको बाँध दिया, और अपने सरदार के हुक्म के अनुसार, उनको मगरों

का पेट भरने के लिये इस तालाब में छोड़ दिया गया।

'हमें यहाँ बाँधकर उनके गये अभी कोई अधिक देरी नहीं हुई है। अगर उन पेड़ों के बीच में जाँच-पड़ताल की गई, तो वे जिस रास्ते से गये हैं, वह रास्ता भी मालूम हो जायेगा।" सैनिकों ने कहा।

सब के सब उन पेड़ों के झुरमुट में जाकर देखने लगे। उनको ब्याघ्रदत्त अपने सैनिकों के साथ जाता हुआ दिखाई दिया।

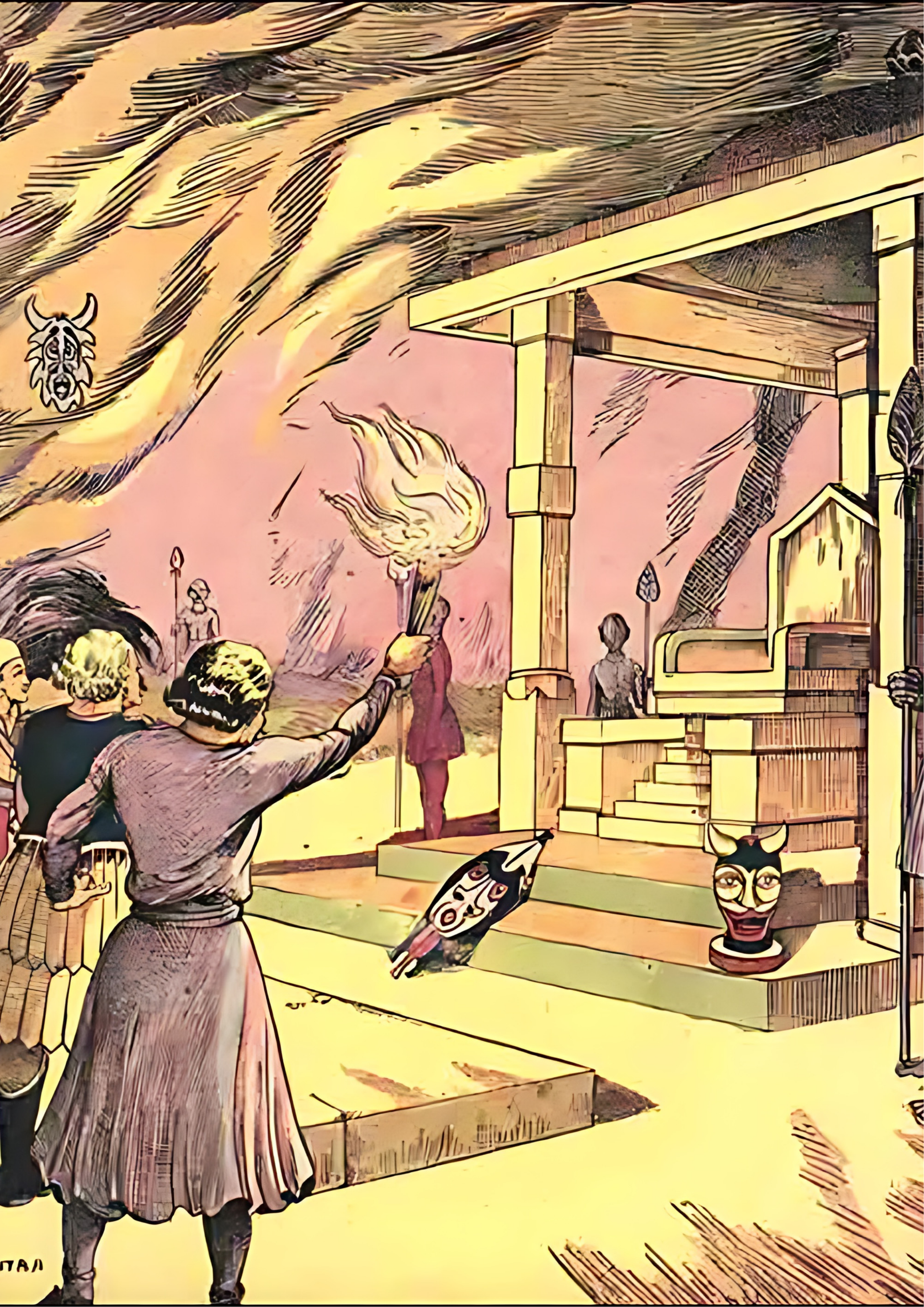
समरसेन व्याघ्रदत्त को देखते ही अपने दाँत पीसने लगा। परन्तु अपने दो-चार सैनिकों को लेकर वह उसका मुकाबला तो कर नहीं सकता था। इसलिये पहिले उसने शिवदत्त के ठिकाने के बारे में जानने की ठानी। समरसेन अभी यह सोच ही रहा था कि एक सैनिक ने चिल्लाकर पेड़ की टहनी की और हाथ दिखाया। वहाँ एक टहनी पर से एक कागज़ लटका हुआ था। समरसेन ने चकित हो उसको पकड़ा और उतावला हो उसे खोलने लगा। उसमें यह लिखा हुआ था:-



"यह भयङ्कर प्रदेश है। जल्दी ही इस इस इलाके को छोड़कर चले जाओ।"

समरसेन ताड़ गया कि वह शिवदत्त की ही सलाह थी। यह भी लगता था कि उसने वह जल्दी में ही लिखा था। अक्षर टेढ़े-मेढ़े थे। समरसेन ने झट निश्चय कर लिया कि वहाँ से तुरन्त जाने में ही अपना भला था।

समरसेन ने, जिस रास्ते से आया था, उसी रास्ते से वापिस जाना चाहा। परन्तु एक सैनिक ने पास की एक गुफ़ा की ओर इशारा कर कहा- "देखिये, लगता है, गुफा में से कई आदमी गये हैं। रास्ता बना हुआ है।"



उस तरफ समरसेन ने दो चार कदम आगे रख, स्वयं देखा। उसे सैनिकों का कहना सच ही लगा। उसे यह भी सन्देह हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि शिवदत्त भी इसी रास्ते से बाहर जा भाग निकला हो।

समरसेन गुफा के पास जा अन्दर झाँकने लगा। वहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा था। एक सैनिक ने मशाल जलाई और उस मशाल की रोशनी में वे आगे बढ़ने लगे।

थोड़ी दूर जाने पर उनको जो दृश्य दिखाई दिया, उससे उन्हें डर भी लगा और आश्चर्य भी हुआ। एक जगह पत्थर का गढ़ा हुआ सिंहासन था। उसकी चारों और मनुष्यों की मूर्तियों थीं। उनका चेहरा, और उनके अस्त्र-शस्त्र देखकर मालूम होता था कि वे शिकारी थे।

"हो सकता है कि शिकारियों के यह किसी सरदार की समाधि हो। कुछ भी हो, मैंने अपने जन्म में इतनी भयङ्कर जगह कहीं भी न देखी। शिकारियों की इन मूर्तियों को देखकर मुझे उससे कहीं अधिक डर लग रहा है, जो पहले-पहल मुझे मान्त्रिक एकाक्षी को देखकर भी न हुआ था।" समरसेन ने कहा।



जब उनका सरेदार ही डरने लगा, तो सिपाहियों का तो कहना ही क्या? डर के मारे उनकी बुरी हालत थी। वे एक दूसरे की ओर ताकने लगे। एक सैनिक तो भय से पीछे की ओर भी भागने लगा।

समरसेन को बिना सोचे कही अपनी बात पर बड़ा अफसोस हुआ। सरदार को किसी भी हालत में अपने मय को बाहर व्यक्त नहीं करना चाहिये।

समरसेन बाकी सैनिकों को ढाढस दे, गुफा के दरवाज़े की तरफ जाने लगा। इस इलाके में जल्द से जल्द दौड़कर चले

जाने में ही, उसने अपना और अपने सैनिकों का फायदा समझा। उसे शिवदत्त का ठिकाना मालूम करना बहुत मुश्किल लगा। शिवदत्त की बात छोड़ उसने फिर वहाँ जाना चाहा, जहाँ से वह आया था। परन्तु उसके लिये वहाँ भी परिस्थितियाँ अनुकूल न थी। एक और एकाक्षी का डर था और दूसरी ओर कुम्भाण्ड का।

चाहे कितनी ही मुसीबतों में से गुजरना पड़े, शिवदत्त से मिलना ही समरसेन ने अच्छा समझा। देवी का दिया हुआ त्रिशूल कहाँ था, यह वह जानता था। एकाक्षी और चतुनेत्र के गुरु का वह त्रिशूल था। इसलिये उसकी शक्ति महान थी।

परन्तु शिवदत्त के व्यवहार को देखकर समरसेन को थोड़ा सन्देह होने लगा। क्या सचमुच वह उसका मित्र था, या मित्र होने का ढोङ्ग कर रहा था?

यह बात तो साफ थी कि नाव में रखी धन राशि और उसकी रक्षा करनेवाली नाग कन्या के बारे में ये सब जानते थे। उसके लिये एकाक्षी और चतुनेत्र के अलावा, शिवदत्त और ब्याघ्रदत्त भी जमीन-आसमान एक कर रहे थे। इन सब के आपसी झगड़ो में वह व्यर्थ स्वयं फँसा जा रहा था।

यह सोचता सोचता समरसेन गुफा के बाहर निकला। यह सोच ही रहा था कि किधर जाया जाय कि उसे शोर-शराबा सुनाई दिया। फिर उस पर बरछे और बाणों की वर्षा होने लगी।

"दुश्मन हैं। पत्थरों के पीछे छुप जाओ।"चिल्लाता चिल्लाता समरसेन पत्थरों की तरफ भागा। उसको पहाड़ों पर से बाणों की वर्षा करते बहुत से सैनिक दिखाई दिये। वे कौन हो सकते हैं? व्याघ्रदत्त के सैनिक है या कुम्भाण्ड के शिकारी?
(अभी और है)





एक शहर में तीन भाई रहा करते थे। उनके नाम थे खतरा, आफत और मुसीबत। यद्यपि वे पेशे से चोर नहीं थे, तथापि चोरी करने में वे बड़े निनुण थे। उन लोगों ने अपनी निपुणता राजा को दिखानी चाही।

सबसे बड़े भाई खतरे ने राजा के पास यों चिट्ठी भेजी-

"मैं कल आपके शहर में चोरी करने जा रहा हूँ। इसलिये लोगों को सावधान रहने के लिये ढिँढोरा पिटवा दीजिये। आपका विनीत, खतरा।"

चोरी करनेवाला क्या कहकर आता है? राजा ने सोचा, शायद किसी ने शरारत करने के लिये यह लिख भेजा है। पर चूँकि प्रजा की रक्षा करना उसका कर्तव्य था, इसलिये उसने शहर में ढिँढोरा पिटवा दिया कि खतरा नाम का कोई आदमी कल शहर में चोरी करने आ रहा है। इसलिये सब लोग चौकन्ने रहें।

अगले दिन खतरा शहर में पहुँच गया। ढावेवाली बुढ़िया के पास जाकर खाना तैयार करने के लिये कहा।

"मैं अभी कुएँ से पानी लाकर खाना बनाऊँगी, बैठो, बेटा!" यह कह बुढ़िया घड़ा लेकर चली गई। बाद में खाना खाते खाते खतरे ने बुढ़िया से पूछा-"क्या हालचाल है?"

"सुना है, खतरा नाम का आदमी शहर में चोरी करने आ रहा है। पैसेवाले डर के मारे काँप रहे हैं।" बुढ़िया ने कहा।

खतरे ने भोजन कर बुढ़िया को एक रुपया दिया। बुढ़िया ने "एक" कहकर उसको कसोरे में डाल दिया।

राजेश्वर प्रसाद अरोड़ा



खतरा ढाबा छोड़कर एक बड़ी दुकान के पास गया। "सेठजी, पान के पत्तों की एक एक ढेरी क्या भाव दे रहे हैं?"

"सस्ती ही है, बेटा! सिर्फ चार आने।" सेठ ने कहा।

"यह लीजिए चार आने। अगर एक ढेरी में तीन सौ पत्तों से कम हुये, तो मैं न लूँगा। पहले मुझे अपनी जरूरत के लिये पच्चीस पत्ते इधर दे दीजिए। बाकी मैं फिर ले जाऊँगा। अब मैं एक जरूरी काम पर बगलवाले बाज़ार में जा रहा हूँ।" खतरे ने कहा।

पैसा मिल ही गया था, इसलिये सेठ ने कहा-"जैसा तुम चाहो करो, बाबू!" वहाँ से खतरा एक कपड़े की दुकान पर गया। उसने पूछा-"एक अच्छा सा काश्मीर शाल दिखायेंगे?" एक शाल, जिसका दाम तीन सौ रुपया था, उसने चुना। बहुत देर तक भाव-ताव करने के कारण दुकानदार उसको २५ रुपये कम करके देने में राजी हो गया।

"देखिये। सुना है, शहर में चोरों का अधिक डर है। इसलिये मैं साथ रुपये नहीं लाया हूँ। मैंने अपना सारा रुपया उस सेठ की दुकान में रख छोड़ा है। अगर मेरे साथ अपना कोई आदमी भेजें, तो मैं तुरन्त रुपये भिजवा दूँगा।" खतरे ने कहा।

दुकानदार ने शाल खतरे को दे दिया, और पैसा बसूल करने के लिये अपना भाई साथ भेज दिया। खतरे ने सेठ के पास आकर कहा-"सेठजी, मैं जरा जा रहा हूँ। इस आदमी को २५ कम तीन सौ देकर जल्दी भिजवा दीजिये।"

"अच्छा बाबू ऐसा ही सही। आप जाइये।" कहते कहते सेठ ने पान के पत्तों की ढेरी निकाली। खतरा चला गया।

सेठ पान के पत्ते एक एक करके गिनने लगा। दुकानदार के भाई ने कहा-"सेठजी! क्या मुझे जल्दी न भेज सकेंगे? उधर बहुत काम बाकी पड़ा है।"

"तुम्हारा ही तो काम देख रहा हूँ भाई।" सेठ ने कहा।

"आप को पान के पत्ते गिन रहे हैं और कहते हैं कि मेरा काम देख रहे हैं?" दुकानदार के भाई ने पूछा।

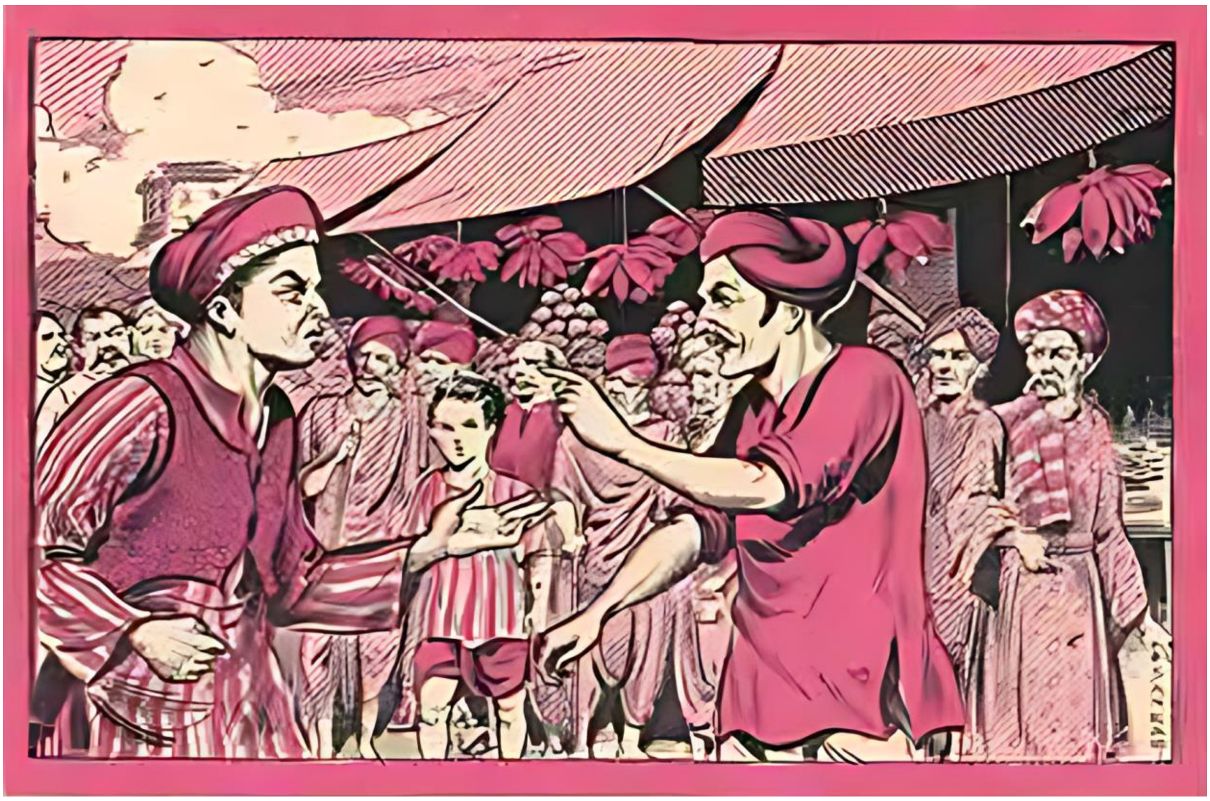
दोनों झगड़ने लगे।

"उस आदमी से हमें पचीस कम तीन सौ रुपये मिलने हैं।" दुकानदार के भाई ने कहा।

"और मुझे उन्हें देने हैं, पच्चीस कम तीन सौ पान के पते। मैं भला रुपये कहाँ से लाकर दूँ?" सेठ ने कहा।

दोनों लड़ते झगड़ते राजा के पास फैसले के लिये गये। राजा ने सब कुछ सुनकर अनुमान किया कि वह खतरे की ही करतूत थी। इसलिये उसने उन दोनों को नुकसान बराबर बाँट लेने के लिये कहा।

उस दिन शाम को राजा के पास एक और चिट्ठी पहुँची। आफत ने इत्तला दी थी कि वह अगले दिन शहर में आकर चोरी करेगा।





इस बार राजा चौकन्ना हो गया। मन्त्री को बुला कर कहा-"आफत नामवाला आदमी, कल शहर में चोरी करेगा। उसको पकड़ने की जिम्मेवारी तुम्हारी रही।"

अगले दिन आफत ने शहर में पहुँचकर बुढ़िया के ढ़ाबे में खाना परोसने के लिये कहा। पानी लाने के लिये बुढ़िया कुँए के पास गयी। उस बीच में आफत ने कसोरे में से रुपया चुरा लिया।

"क्यों नानी क्या हालचाल है?" आफ़त ने पूछा।

"क्या हालचाल होंगे बेटा? कल खतरा दो दुकानदारों को धोखा देकर चम्पत हो गया। आज सुना है, कोई आफत चोरी करेगा। उसको पकड़ने के लिये, मन्त्री खुद कोशिश कर रहे हैं।" बुढ़िया ने कहा।

"अरे अरे! शायद मन्त्री बाल-बच्चोंवाले हैं?" आफ़त ने तरस खाते हुए कहा।

"बेटा! उनकी एक ही लड़की है। छुटपन में ही उसका पति घर छोड़कर भाग गया था। अभी तक वापिस नहीं आया है।" बुढ़िया ने बताया।

आफ्त भोजन खा, बुढ़िया को रुपया दे चला गया। बुढ़िया ने "दो" कहा और उसको कसोरे में डाल दिया।

आफत वेष बदलकर शहर में एक तालाब के किनारे पेड़ के नीचे बैठ गया। आने-जानेवालों से कहने लगा कि वह मन्त्री का दामाद है। यह खबर जल्दी ही मन्त्री तक पहुँची। वह तालाब के किनारे आफत को पा, सोचने लगा कि उसका दामाद वापस आ गया है। वह बड़ा खुश हुआ और उसको अपने घर ले गया। रात को जब भोजन करने के बाद मन्त्री

चोर को पकड़ने के लिये जाने लगा, तो आफत ने कहा कि वह भी उसकी मदद के लिये साथ आयेगा। उसने जिद पकड़ी। मन्त्री मान गया।

मन्त्री के घर के आङ्गन में ही अपराधियों को सजा देने के लिये एक यन्त्र था। उसको देख कर आफत ने कहा-"यह क्या है, ससुर जी?"

"अगर इसमें सिर रखकर कील कस दी जाय तो दर्द होती है, और तब चोर सच बता देते हैं।" मन्त्री ने कहा।

"मैं अपना सिर उसमें रखता हूँ, और आप कील कस दीजिये, ससुर जी।" आफत ने कहा। पर मन्त्री ने न माना।

"अगर तू देखना ही चाहता है, तो देख, मैं अपना ही सिर रखे देता हूँ।" कहते कहते मन्त्री ने उस यन्त्र में सिर रख दिया। आफ्त ने ज़ोर से कील कस दी।

"उतना मत कसो। गले में दर्द हो रहा है। जल्दी कील ढीली करो।" मन्त्री दर्द के मारे चिल्लाया।



'यह कील तो ढ़ीली नहीं हो रही है। क्या करूँ ससुर जी?" आफत गिड़ गिड़ाने लगा।

"तो जा, सास से कहकर हथौड़ा वगैरह ले आ।"मन्त्री ने कहा।

आफत मन्त्री की पत्नी के पास जाकर कहने लगा-"सास जी, सास जी! ससुर जी को चोर तङ्ग कर रहे हैं। घर में रखे गहने, जवाहरात जल्दी दे दो।"

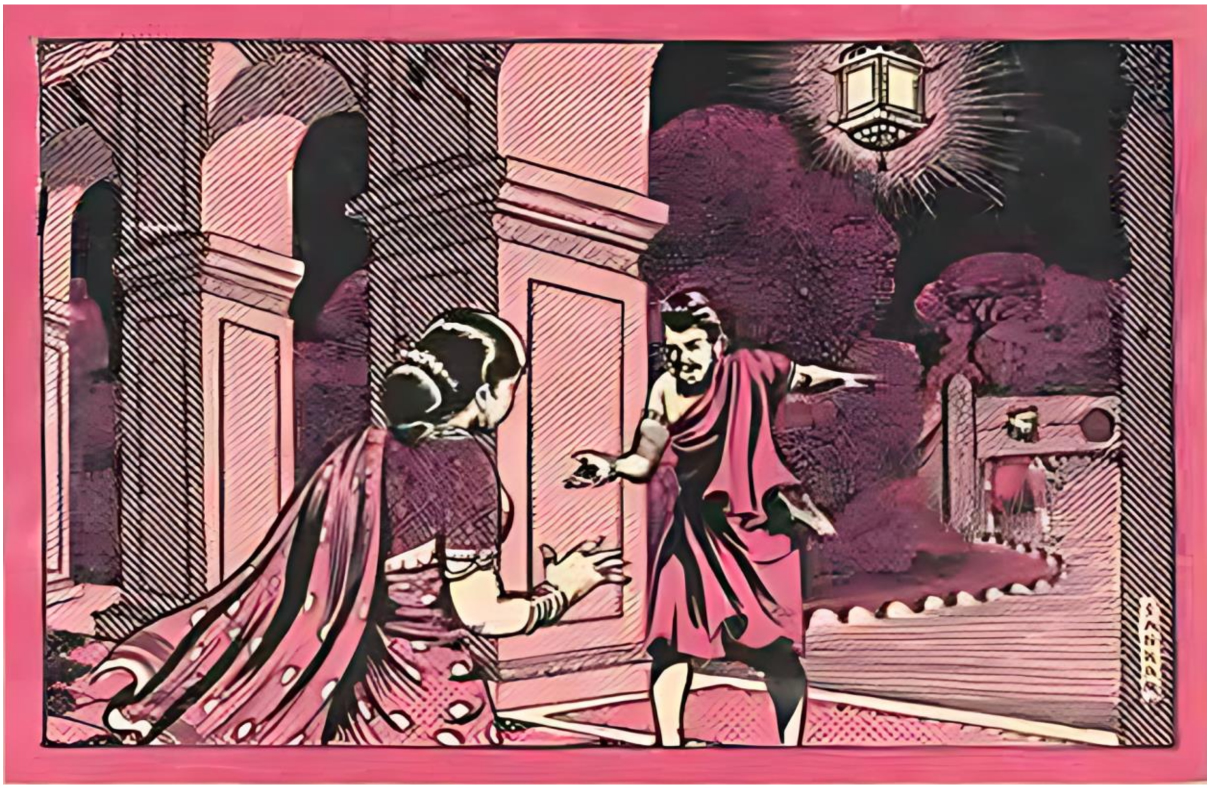
मन्त्री की पत्नी ने तुरन्त कुछ न दिया, और इधर उधर के सवाल पूछने लगी।

"सास जी दे नहीं रही हैं, समुर जी।" आफत जोर से चिल्लाया।

"जल्दी दे दो। मेरी जान जा रही है।" मन्त्री चिल्लाया। मन्त्री की पत्नी ने फिर कुछ ने पूछा और घर में रखे गहनों की पोटली बाँध उसको दे दी। आफत अपने रास्ते पर चला गया। अगले दिन मन्त्री को यन्त्र में से निकाला गया।

उसी दिन राजा के पास मुसीबत से तीसरी चिट्टी मिली। चिट्ठी पढ़ते ही राजा खौल उठा। दो बार चोर कहकर आये, पर उन्हें पकड़ा न जा सका। इसलिये स्वयं राजा ने उन्हें इस बार पकड़ने की ठानी। अगले दिन मुसीबत सहर में आया। ढावेवाली बुढ़िया के पास जाकर खाना माँगा। ज्यों ही वह घड़ा लेकर पानी लाने गई कि उसने कसोरे में से रुपया चुरा लिया।

जब बुढ़िया ने वापिस आकर खाना बनाकर उसे परोसा तो मुसीबत ने उससे पूछा-"क्या हालचाल है?" "बेटा! क्या हालचाल होंगे? एक रोज खतरा आकर चोरी कर गया, और दूसरे दिन आफत आकर मन्त्री की आँखों में धूल झोंक गया। आज सुना है, मुसीबत नाम का कोई आयेगा। उसको पकड़ने के लिये राजा ने स्वयं ठानी है।" बुढ़िया ने कहा।



मुसीबत ने रुपया दिया। बुढ़िया ने "तीन कहा और उसको कसोरे में डाल दिया। मुसीबत ने शहर में तरह तरह की खाने की चीज़े खरीदी। उनको एक बोरी में रख श्मशान में ले गया और वहाँ एक पेड़ के नीचे उनकी दुकान लगा ली। रात को दिया जलाकर बैठ गया।

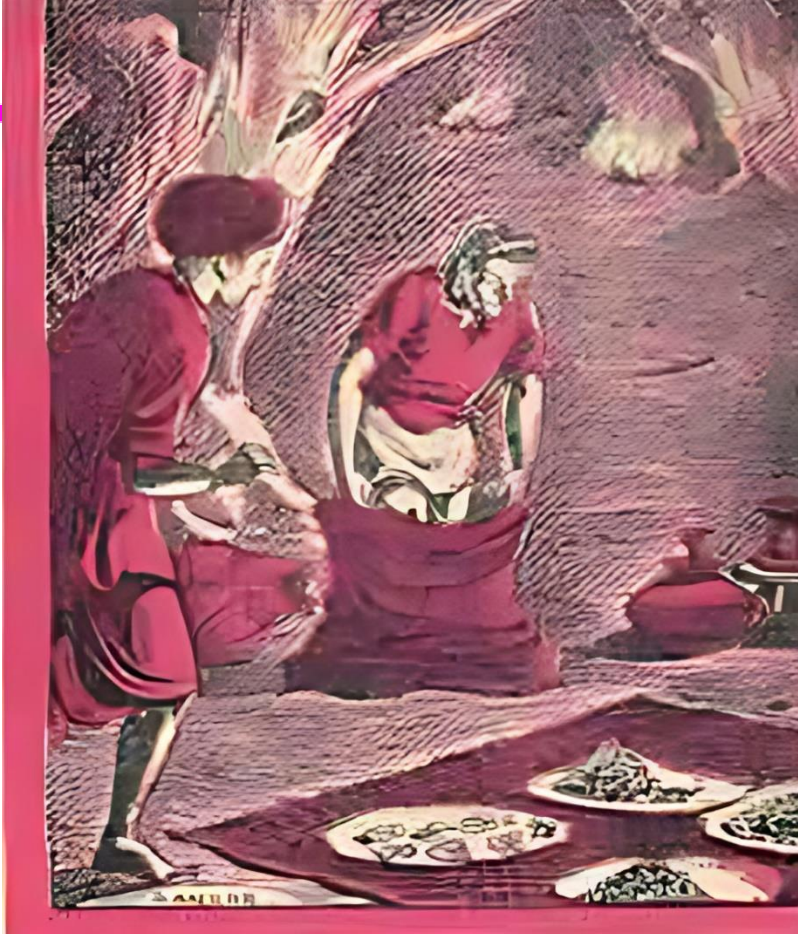
रात को जब राजा घोड़े पर चढ़कर शहर का पहरा दे रहा था, तो उसको अन्धेरे में चिराग दिखाई दिया। उसे सन्देह हुआ। वह मुसीबत के पास पहुँचा।

"इतनी रात में यहाँ तूने दुकान क्यों लगा रखी है? कौन आयेगा?" राजा ने उससे पूछा।

"महाराज, चोर इधर से आकर मेरे पास से खाने की चीजे खरीदकर मुझे खूब पैसा दे जाते हैं। उनके आने का समय हो गया है। आप चले जाइये, हुजूर गरीब हूँ। पाँच-दस पैसे बना लूँगा।" मुसीबत ने कहा।

"मैं तुझे उनसे दस गुना अधिक पैसा दूँगा। मुझे यहीं छुपा रहने दो।" राजा ने कहा।

"यहाँ छुप बैठने के लिये जगह कहाँ है? अगर छुपकर बैठना ही है, तो



उस बोरी में बैठ जाइये। मैं ऊपर से बाँध दूँगा। चोरों को मालूम न हो सकेगा।" मुसीबत ने कहा।

कहीं कपड़े खराब न हो जायें, इसलिये अपनी पोशाक और पगड़ी उतार राजा बौरी में घुस गया। मुसीबत ने बोरी बाँध दी।

'महाराज! चार आते से लगते हैं। मैं आपका घोड़ा दूर बाँध आता हूँ। आप कोई आवाज मत कीजिये।" कहते हुये मुसीबत ने राजा की पोशाक, पगड़ी, तलबार पहनी, और घोड़े पर चढ़ सीधा खजाना गया। खजाने के नौकरों ने मुसीबत को देखकर समझा कि राजा ही

आये हैं। अन्धेरे में चेहरा साफ़ साफ़ न दिखाई दिया।

"मुसीबत खजाने पर धावा बोलनेवाला है। सारा रुपया गठ्ठर बाँधकर इघर ले आओ।" मुसीबत ने आवाज बदलकर कहा।

नौकरों ने जैसा उसने कहा, वैसा ही किया। खजाने का सारा रुपया ले मुसीबत चम्पत हो गया।

अगले दिन किसी ने बोरी खोलकर राजा को बाहर निकाला।

कहकर चोरी करनेवालों को पकड़ने के लिये राजा ने बहुत कोशिश की, पर वे मिले नहीं। आखिर, तीनों भाई अपने आप राजा के पास गये।

"तुम कौन हो?" राजा ने पूछा।

जब उन्होंने अपने नाम बताये, तो राजा को बहुत गुस्सा आया। उनको कैद में डाल देने के लिये सैनिकों को आज्ञा दी।

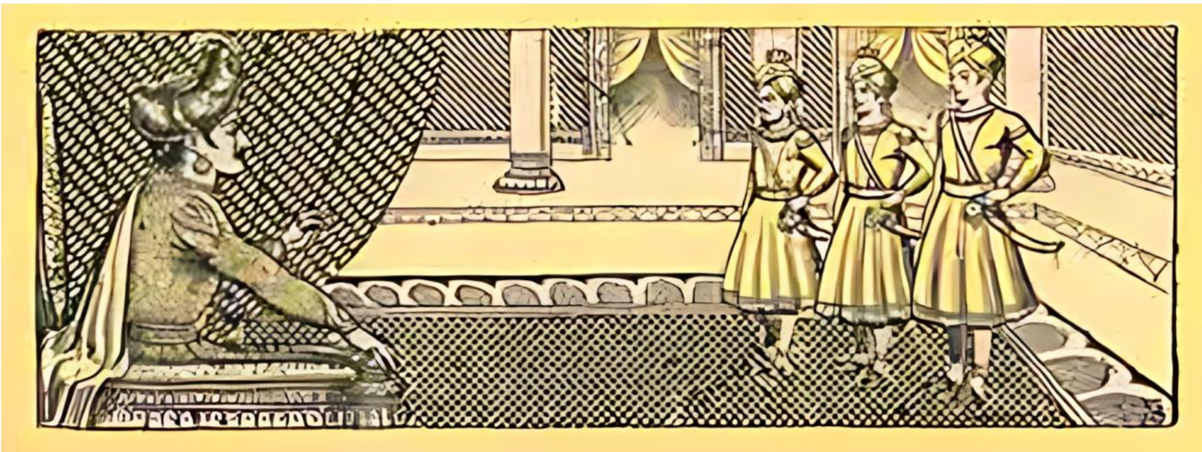
"जल्दबाजी मत कीजिये महाराज! हम चोर नहीं हैं। हम चौर-विद्या में निपुण हैं। हम अपनी शक्ति महाराज को दिखाकर इनाम लेने आये हैं। चोरी की हुई कौड़ी कौड़ी जिन जिनकी है, हम उनको वापिस देंगे।" तीनों भाइयों ने कहा।

राजा का पैसा राजा को, मन्त्री के गहने मन्त्री को, दुकानदार को काश्मीर शाल, और बुढ़िया को दो रुपये उन्होंने वापिस कर दिये।

तब राजा ने सन्तोष के साथ पूछा- "तुम्हें क्या चाहिये?"

"महाराज! आप हमें अपनी नौकरी में ले लीजिये। आपके राज्य में चोरों को न रहने देंगे। यही इनाम हम माँगते हैं।" तीनों भाइयों ने कहा।

उनकी इच्छा के अनुसार, उनको अपनी नौकरी में रख, राजा ने उनका सम्मान किया।





किसी गाँव में एक कञ्जूस आदमी रहा करता था। उसका नाम दमड़ीमल था। उसकी पत्नी सौन्दर्यवती बहुत ही सुन्दर थी। यद्यपि अच्छी तरह जिन्दगी बसर करने के लिये उसके पास सब साज-समान थे, फिर भी वह दमड़ी दमड़ी जोड़ता गरीबों की तरह रहता। पत्नी के लिये एक गहना भी न बनवाता।

एक बार पड़ोस के बनवारीलाल ने अपनी पत्नी के लिये पाँच सौ रुपये का चन्द्रहार बनवाया। बनवारीलाल की पत्नी उस चन्द्रहार को गले में डाल सारे गाँव में धूम-धाम कर सौन्दर्यवती के घर भी हो आई। जब से सौन्दर्यवती ने यह चन्द्रहार देखा, तब से उसे नींद न आई। यह जिद करने लगी कि उसे भी वैसा चन्द्रहार चाहिये। वह बहुत ही सुन्दर था।

"क्यों फालतू रुपया खर्च करती हो? कपड़ा, गेहूँ बगैरह हो तो कुछ बात भी है। पाँच सौ रुपये लगाओ तो चार बीघे जमीन मिलती है। दो जोड़े बैल जाते हैं। क्या पागलपन है?" दमडीमल ने पत्नी को बुरा-भला कहा।

"बनवारीलाल के पास क्या हमसे कुछ अधिक पैसा है? फिर हमारे बाल-बच भी नहीं हैं। उनके चार बच्चे हैं। बनवारीलाल की पत्नी भी बन्दरी-सी लगती है। तब भी बनवारीलाल ने पत्नी के लिये चन्द्रहार बनाकर दिया। आप कम से कम एक नथ तो बनवाकर दीजिये।" सौन्दर्यवती ने पति से कहा।

परन्तु दमड़ीमल ने लाख खुशामद करने पर भी पत्नी की इच्छा को पूरा करने के लिये राजी न हुआ।

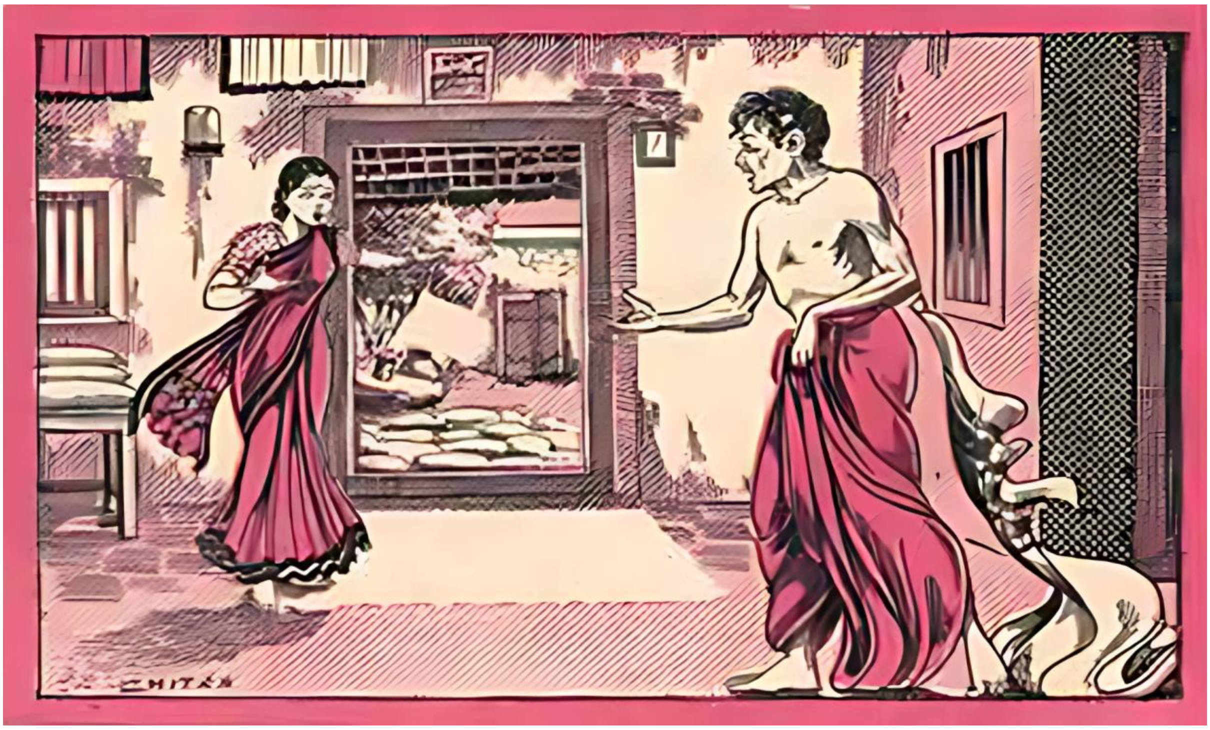
कुमारी बिमला पनिकर

सौन्दर्यवती ने सोचा कि अगर पति ने उसके गले में चन्द्रहार देखा, तो हो सकता है, वह भी उसके लिये एक बनाकर दिल्या दे। इसलिये एक दिन यह बनवारीलाल की पत्नी से चन्द्रहार उधार ले आई, और उसे गले में लगा, पति के पास आकर मुस्कुराते हुये पूछा-"कैसा लग रहा है जी?" दमड़ीमल पत्नी के गले की ओर देखकर क्षण भर तो बड़ा खुश हुआ। पर कहीं ऐसा न हो, वह चन्द्रहार बनवाने के लिये जिद करने लगे, इस डर से दमड़ीमल ने कहा-"अच्छा तो लग रहा है, पर इतनी कीमती चीजों की हमें क्या जरूरत है? उनका गहना उन्हें वापिस कर दे।"

"अभी को बहुत काम पड़ा है। कल सबेरे दे दूँगी।" सौन्दर्यवती ने नाक-भौं चढ़ाते हुये कहा।

सबेरे पत्नी ने पति से पूछा-"क्या आपने रात को पिछवाड़े का दरवाजा भूल से खुला छोड़ दिया था?"

"नहीं तो! कहीं चोर तो नहीं आये? उनका चन्द्रहार वापिस कर दिया था न? कोई चीज़ चोरी तो नहीं गई है?" दमड़ीमल ने डरते डरते पूछा।



"चन्द्रहार को मैंने सन्दूक में रख दिया था। घर में तो कोई चीज़ गई नहीं लगती। कहती कहती सौन्दर्यवती ने सन्दुक खोलकर देखा। उसमें चन्द्रहार न था।

तब क्या था? सौन्दर्यवती छाती पीट पीटकर रोने लगी। दमड़ीमल के तो होश गायब हो गये।

"पागल कहीं की! कीमती चीजों को क्या तुरन्त वापिस नहीं किया करते? अब पाँच सौ रुपये फेंककर गहना बनवाकर उनको देना ही होगा न?" दमड़ीमल ने उबलते हुये कहा।

"क्या मैंने कोई सपना देखा था कि आप पिछवाड़े का दरवाजा यो खुला छोड़ देंगे?" सौन्दर्यवती ने पूछा।

कुछ भी हो, दमड़ीमल को पाँच सौ रुपये का चन्द्रहार आखिर बनवाना ही पड़ा।

चन्द्रहार को पत्नी को देते हुये उसने कहा-"जा, जल्दी इसे बनवारीलाल के घर में दे आ। लापरवाही की जो सजा मिली है, वह काफी है। आइन्दा होशियारी से रहना।"

सौन्दर्यवती पति की बात सुनती गई और मन ही मन हँसती गई। चन्द्रहार को गले में डालकर उसने यों कहा:-

"यह हमारा ही है। मैंने चन्द्रहार सन्दूक में नहीं रखा था। अलमारी में रख कर भूल गई थी। जब बाद में वह दिखाई दिया, तो उसी रोज़ उसे बनवारी लाल जी के घर वापिस दे आयी थी। अब हमें बनवारीलाल को कुछ देने की जरूरत नहीं है।"

पत्नी की चाल समझकर दमड़ीमल चकरा गया। उसे न सूझा कि क्या कहा जाय।





ब्रह्मदत्त के काशी राज्य में बोधिसत्व एक सोने के मोर के रूप में पैदा हुये।

एक बार जब काशी राजा की एक पत्नी को सपने में सोने का मोर दिखाई दिया तो उसने उसे पाने की पति से जिद की। राजा ने मन्त्रियों से सलाह-मशवरा किया। उन्होंने कहा कि शायद इस विषय में ब्राह्मणों को मालूम हो! जब त्राह्मणों से पूछा गया तो उन्होंने कहा कि यह बात शिकारियों को मालूम हो सकती है।

राजा दण्डकारण्य के पास रहनेवाले एक शिकारी को बुलाकर कहा- "अगर तू उस सोने के मोर को जिन्दा पकड़ लाया तो तुझे बहुत-सा इनाम दूँगा।" शिकारी मान गया। वह मोर के लिये सात वर्ष तक फँदा डालता रहा। परन्तु मोर न फैसा; शिकारी मर गया। मोर चाहनेवाली वह रानी भी गुज़र गई। राजा ने किले की ड्योढ़ी के सामने यह घोषणा खुदवा दी-

"दण्डकारण्य में एक सोने का मोर बिहार कर रहा है। जो कोई उसका माँस खायेगा, वह न बूढ़ा होगा, न मरेगा ही।"

उस राजा के बाद युवराज ने सोने के मोर के लिये एक और शिकारी भेजा। परन्तु वह भी मोर पकड़ने में सफल न हुआ। इस तरह छः पीढ़ियाँ गुजर गई। सातवीं पीढ़ी का राजा जब गद्दी पर बैठा, तो उसने भी वह घोषणा देखी। उसने भी शिकारी को बुलवाया। शिकारी ने चालाकी से मोर को पकड़कर काशी राजा को दे दिया।

उस सोने के मोर को देखते ही राजा को आश्चर्य हुआ। उसमें मोर के लिये एक सम्मान-भावना भी पैदा हुई। उसके लिये

उसने अपने सिंहासन के पास एक उपयुक्त सिंहासन भी बनवा दिया।

तब मोर का रूप धारण किये हुये बोधिसत्व ने पूछा-"राजा! तुम मुझे क्यों बन्दी बनाकर यहाँ लाये हो?"

"तेरा माँस खाने से न बुढ़ापा आता है, न मौत ही।" राजा ने कहा।

"तो फिर क्या मैं मारा ही जाऊँगा?" बोधिसत्व ने पूछा।

"हाँ।" राजा ने कहा।

"अरे पागल! जब मेरा मरना ही सच है, तो मुझे खानेवाले मरे और कैसे रह सकते हैं?" बोधिसत्व ने फिर पूछा।

"तेरा तो सुनहरा रङ्ग है तेरा मांस खाने सवाले का भी सुना है, वही रङ्ग हो जाता है। फिर वह मरता भी नहीं है।" राजा ने कहा।

"अच्छा! तो राजा मैं तुम्हें बताता हूँ, मेरा रङ्ग सुनहरा हो जाने का क्या कारण है। पहले किसी जमाने में इस राज्य का महाराजा था। मैने न्याय और धर्म के अनुसार राज्य का परिपालन किया। इसी लिये मैं इस जन्म में सोने के मोर के रूप में पैदा हुआ हूँ।" बोधिसत्व ने कहा।

काशीराज चकित हो गया। "क्या धर्म-परिपालन का यह परिणाम है? क्या तू इस बात को सिद्ध कर सकता है? क्या कोई सबूत है?" राजा ने पूछा।

"क्यों नहीं है? जब में महाराजा था तो मैं एक नवरत्न खचित दिव्य रथ में सवारी किया करता था। वह बगीचे में, तालाब के किनारे भूमि में दबा हुआ है।" बोधिसत्व ने कहा।

काशी राजा ने जब तालाब के किनारे खुदवाया, तो वह दिव्य रथ दिखाई दिया। तब से राजा ने बोधिसत्व को अपने गुरु के रूप में रख लिया।





पुराने जमाने में जब काशीर देश पर अवन्ती वर्मा राज करता था, तो वहाँ हर वर्ष अकाल पड़ता।

काश्मीर देश बड़े बड़े ऊँचे पहाड़ों के बीच में है। वहाँ नदियाँ पर्वतों से निकलकर बड़ी तेजी से नीचे के मैदानों की ओर बहती हैं। इसलिये नदियों में अक्सर बाढ़ आया करती।

झील महापद्म के पानी से हजारों बीघों की सिञ्चाई होती थी, और अच्छी-अच्छी फ़सले होती थीं। पर लोगों का इतना सौभाग्य न था कि हर वर्ष अपनी मेहनत का फल पा सकें। क्योंकि उसी इलाके में, वितस्ता नदी में अक्सर बाढ़ आया करती, और बाढ़ का पानी जब झील में गिरता, तो झील का पानी भी दूर दूर तक फैल जाता। बहुत हानि होती।

अवन्ती वर्मा बहुत ही धर्म-परायण व्यक्ति था। वह यह सोचा करता कि उसी के किसी कसूर का उसकी प्रजा फल भोग रही थी। उसने देवी-देवता की पूजा करवाई, यज्ञ-याग करवाये। पर नदियों में बाढ़ आना बन्द न हुआ।

जब इस तरह काफी समय बीत गया तो राजा के कानों में एक खबर पड़ी। सुख्या नाम का व्यक्ति, जो कोई उसको मिलता, उसके सामने बड़ी हाँका करता कि वह नदियों की बाढ़ रोक देगा। लोग उसे पागल समझते और उससे नित बकवास करवाया करते।

अवन्ती वर्मा बाढ़ रोकने के लिये सब कुछ करने को तैयार ही था, इसलिये उसने सुख्या के पास खबर भिजवाई। सुख्या राजा के पास आया।

"सुना है, तू कह रहा है कि तू दुर्भिक्ष मिटा देगा। क्या यह सच है?" राजा ने पूछा।

हाँ, महाराज! अगर नदी में बाढ़ रोक दी गई तो दुर्भिक्ष अपने आप ही जाता रहेगा।" सुख्या ने कहा।

"बाढ़ को कैसे रोका जाय? क्या तू रोक सकता है?" राजा ने पूछा।

"हाँ, महाराज! मैं रोक सकता हूँ।" सुख्या ने कहा।

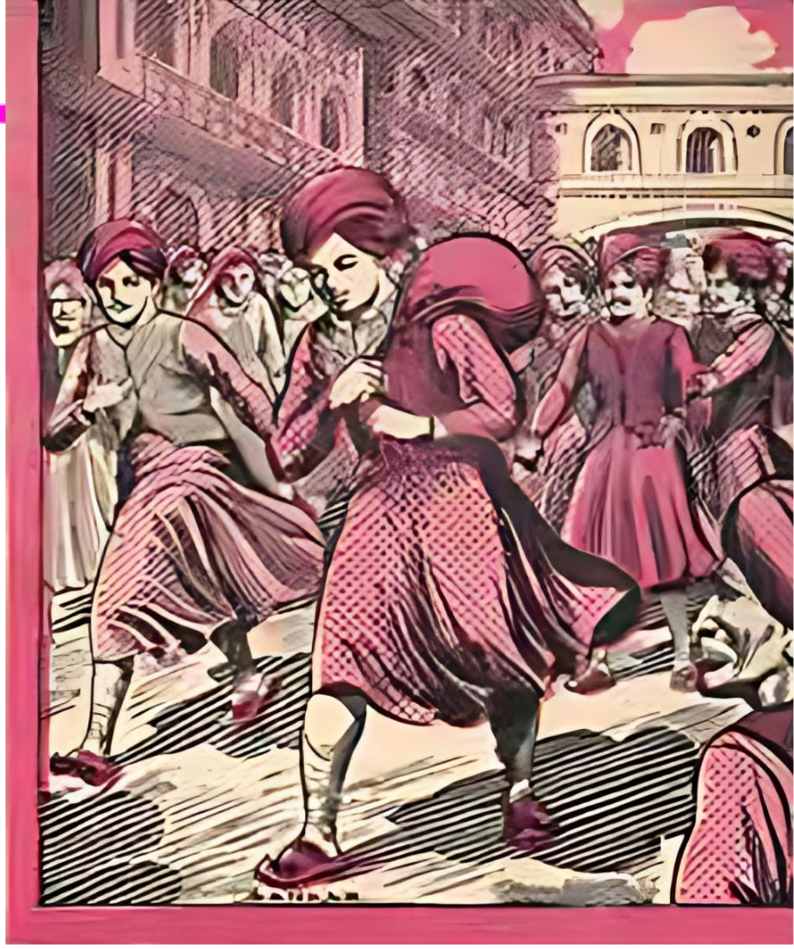
"जो काम हम नहीं कर सके, वह काम तू अकेले कैसे कर सकता है?" राजा ने पूछा।

"पैसा दिल्वाइये। दुनिया में कौन-सा काम है, जो पैसा न कर सके।"

"जितना खजाने में धन है, सब ले जा। पर यह देख कि अगले वर्ष बाढ़ न आये।" राजा ने कहा।

मन्त्री ने राजा को रोकना चाहा, पर राजा ने मन्त्री की एक न सुनी।

सुख्या ख़ज़ाने में से जितनी अशर्फियाँ वह ढो सका, उनका एक गट्ठर बाँधकर वहाँ से निकल पड़ा। लोग भी चिल्लाते, हँसी उड़ाते



उसके पीछे हो लिये। कइयों ने सोचा कि राजा को चकमा देकर वह धन ले जा रहा है। फिर कई ने कहा; सुख्या के साथ साथ राजा भी पागल हो गया है। पर सब के सब यह देखने के लिये उतावले हो रहे थे कि इतने धन का सुख्या क्या करता है।

हर वर्ष हानि पहुँचानेवाली वितस्ता कुछ दूर जाकर, पहाड़ों के बीच घाटी में से बहती थी। सैकड़ों वर्षों से दोनों तरफ के पहाड़ों पर से बड़े बड़े पत्थर लुढ़ककर नदी में गिरने के कारण, पत्थरों का एक पुल-सा बन गया था, जो पानी के प्रवाह को रोक

करता था। जब नदी में बाढ़ न होती थी, तो लोग उन्हीं पत्थरों पर से नदी पार किया करते थे। उन्हीं पत्थरों के कारण नदी में बाढ़ आती। बाढ़ के कारण झील का पानी चारों तरफ जाता और खेती को हानि पहुँचती।

सुख्या धन का गट्ठर लेकर उस जगह पर पहुँचा। उसके पीछे पीछे हजारों आदमी भी चले आये। सुख्या नदी के बीचों-बीच पड़े पत्थरों पर गया, और हाथ भर भरकर अशर्फियाँ फेंकता नदी के पार जाने लगा।

लोगों में होहल्ला शुरु हुआ। अब यह साबित हो गया था कि सुख्या सचमुच पागल था। नहीं तो क्या वह सोने की अशर्फियों को नदी में उस तरह फेंकता? उसको रोकना भी किसी के बस में न था। लोगों में यकायक चहलपहल होने लगी। कई जल्दी जल्दी पानी में उतरकर अशर्फियाँ खोजने लगे। और कई झुण्ड बना कर, बड़-बड़े पत्थरों को एक तरफ हटाकर उसके नीचे पड़ी अशफियों को ढूँढ़ने लगे।

थोड़ी देर में यह बात आसपास के गांवों में भी फैली। लाखों आदमी आकर, हजारों वर्षों से पड़े हुये पत्थरों को नदी के बीच में से हटाकर किनारे करने लगे। उनका उत्साह बढ़ाने के लिये सुख्या खजाने से और पैसा लाता जाता, और पत्थरों के बीच डालता जाता।

साँझ होते होते पत्थरों की उस दीवार का नाम तक न रहा। पानी बिना रुके बहता जाता था। जिन लोगों ने मेहनत की, उनको अशफियों भी मिली।

तब से काश्मीर में न बाढ़ आई, न दुर्भिक्ष ही पड़ा। प्रजा सुख से रहने लगी।

सुख्खा की बुद्धिमत्ता और देश की सेवा की राजा ने बहुत प्रशंसा की। उसको बहुत-सा धन देकर उसका सम्मान किया।





दोषी कौन?

किसी देश में कोई रईस व्यापारी रहा करता था। उसके तीन लड़के थे। मरते समय उसने अपने तीनों लड़कों को पास बुलाकर कहा- "बेटों! मेरे लिये यम के दूत आनेवाले हैं। मैंने बड़ी मेहनत कर काफी सम्पत्ति जमा की है। पर मेरी सम्पत्ति में ये तीन रत्न सब से अधिक बहुमूल्य हैं। अगर किसी कारण तुमने आपस में बँटवारा करना चाहा, तो तीनों एक एक रत्न ले लेना। क्योंकि ये तीनों एक ही मूल्य के हैं।"

पिता के गुजर जाने के बाद, भाइयों ने आपस में बँटवारे का निश्चय किया। जब उन्होंने रत्नों को लेने के लिये तिजोरी खोली, तो दो ही रत्न थे। तीसरा रत्न किसी ने चुरा लिया था। चोर उन तीनों भाइयों में से ही कोई हो सकता था।

"हम में से ही किसी एक ने रत्न लिया है। यह भी हो सकता है कि चोरी करने वाला अपना अपराध स्वीकार करने में दूसरों के सामने हिचके। इसलिये अच्छा होगा कि कल तक रत्न को यथा स्थान पर रख दिया जाय।" बड़े भाई ने कहा।

"अगर यह न हुआ, तब क्या किया जाय?" मञ्झले भाई ने पूछा।

"तीनों जाकर राजा के पास फ़रियाद करें। दोषी का पता लगाना राजा की जिम्मेवारी जो है।" बड़े भाई ने बताया।

"यह बात बिल्कुल ठीक है।" तीसरे भाई ने कहा।

एक दिन और बीत गया। चुराया हुआ रत्न वापिस न मिला। उसी दिन तीनों भाई राजा के पास गये। उससे निवेदन किया कि दोषी का पता लगावें।

राजेन्द्रकुमार जैन



उनका कहना सुनकर राजा को आश्चर्य हुआ। वह उन तीनों भाइयों को अच्छी तरह जानता था ।

"आपके पिता बहुत ही ईमानदार थे। मेरे अच्छे मित्र भी थे। उनके पुत्रों को इस प्रकार मेरी सहायता माँगता देख मुझे खेद भी होता है और सन्तोष भी। थोड़े दिनों में मैं आपका काम कर दूँगा। तब तक आप गरीब बुढ़िया के घर ठहरिये। आपकी हर आवश्यकता को पूरा करने का इन्तज़ान में करवा दूँगा।" राजा ने बड़े प्रेम से कहा।

तीनों भाई गरीब बुढ़िया के घर गये। एक एक करके दिन बीतने लगे। राजा भी इस बात के बारे में रात-दिन सोचता रहता, पर उसको यह न सूझा कि वह सुनवाई कैसे शुरू करे और कैसे दोषी का पता लगाये। एक दिन गरीब बुढ़िया को बुलवाया और उससे यों पूछा-"क्यों बुढ़िया! अतिथियों के कारण तुझे तो कोई कष्ट नहीं हो रहा है?"

"नहीं महाराज! वे तीनों बहुत ही अच्छे हैं। कितने भलेमानस, कितने इज्जतदार।" बुढ़िया ने कहा।

"इसी कारण ही मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है। उनमें कोई जरूर हिम्मती चोर है।" राजा ने कहा।

बुढ़िया को अचरज हुआ। उसने उनके बारे में अधिक जानना चाहा। तब राजा ने जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

"तो महाराज! मैं पता लगा लूँगी कि उनमें कौन चोर है। आप फिक्र मत कीजिये।" बुढ़िया ने कहा।

उस रात को बुढ़िया ने तीनों भाइयों को भोजन परोसते हुये एक छोटी-सी कहानी सुनाई। यह कहानी यह है:-

क था राजा। उसका नाम था सिंहकेतु। उसकी गुणवती नाम की एक लड़की थी। बड़ी होने तक एक पण्डित के यहाँ उसको शिक्षा दी गई। जब उसके विवाह के लिये खोज शुरू हुई तो उसकी पढ़ाई भी बन्द कर दी गई। एक दिन वह अनेक वस्त्र, आभरण, और थोड़ा धन लेकर गुरु के पास गई और उसको गुरु-दक्षिणा समर्पित की। परन्तु उस पण्डित ने उस दक्षिणा को छुआ तक नहीं। उसने कहा-"अगर तू गुरु-दक्षिणा देना चाहती है, तो तू शादी के बाद, पराई होने से पहिले, रात में सब गहने पहनकर मेरे पास अकेली आ।" गुणवती मान गई और वहाँ से चली गई।

कुछ दिनों बाद उसका विवाह हो गया। विवाह के दिन की रात को ही उसने पति से गुरुदक्षिणा की बात कहीं। पति ने कहा-"अच्छा, तो जाकर आ।" गुणवती जब सब गहने पहनकर गुरु के पास जा रही थी तो रास्ते में उसको एक चोर मिला। उसने सारे गहने उतारकर देने को कहा। नहीं तो उसको मारने की धमकी दी। गुणवती ने चोर से भी अपनी गुरु-दक्षिणा





के बारे में बताया, और कहा कि वापिस आते समय उसको अपने गहने दे देगी। चोर मान गया।

गुणवती गुरु के घर पहुँची। गुरु को शिष्या को अपना वचन पूरा करता देख बड़ा सन्तोष हुआ। उसने कहा-"बेटी! तूने मेरी शिक्षा को सार्थक कर दिया। बिना यह जाने कि क्या खतरा आनेवाला है, तूने अपना वचन निभाया। यही तेरी गुरु-दक्षिणा है। तू वापिस जाकर अपने पति के साथ गार्हस्थ्य धर्म निभा।" उसने हृदयपूर्वक उसको आशीर्वाद दिया।

गुणवती ने गुरु को नमस्कार कर, वापिस जाते समय चोर को प्रतीक्षा करते हुए देख कर कहा-'यह लो भाई। अब तुम मेरे गहने ले सकते हो।'

उस बात से चोर का दिल बदल गया। वह गुणवती के पैरों पर पड़ गया। 'माँ! मुझे क्षमा करो। जिस संसार में तुम जैसे व्यक्ति हैं, वहाँ मैं चोरी कर जिन्दगी बसर नहीं कर सकता हूँ।' यह कह यह अन्धेरे में कहीं चला गया।

गुणवती ने पति के पास जा सब कह सुनाया। पति बड़ा सन्तुष्ट हुआ। वे दोनों खुशी-खुशी अपना घर-बार चलाते रहे।"

बुढ़िया की सुनाई हुई कहानी सुन व्यापारी के तीनों लड़के बड़े खुश हुये।

"इस कहानी में सब के सब उदार हैं। पर इनमें सबसे अधिक उदार कौन है? एक ही सन्देह मुझे सताता रहता है। बेटे! क्या मेरा सन्देह मिटा सकोगे?" बुढ़िया ने पूछा।

बड़े भाई ने थोड़ी देर तक सोचकर कहा-"विवाह की ही रात को अपनी पत्नी को गुरु के पास भेजनेवाला पति ही सब से अधिक उदार है।"

दूसरे भाई ने कहा-"उससे बढ़कर गुरु की उदारता है।"

तीसरे भाई ने कहा-"हाथ में फँसी हुई राजकुमारी के गहने न लेकर, उसको छोड़ देनेवाले चोर की उदारता सबसे बड़ी है।"

"पति के कोप का, गुरु के अपमान, चोर की धमकी इन सब को बर्दाश्त करनेवाली गुणवती की उदारता तुममें से किसी को पसन्द नहीं आई।" कहती हुई बुढ़िया हँसी।

उसी दिन राजा के पास जाकर बुढ़िया ने कहा-"महाराज, मेरे घर में रहनेवाले तीनों भाइयों में से निस्सन्देह तीसरा भाई चोर है। आप पूछताछ कर लीजिये।"

राजा ने पूछा कि उसने यह कैसे अनुमान किया। बुढ़िया ने सब कुछ बताकर कहा-"अगर वह लड़का पैसे का लालची न होता तो चोर की उदारता की प्रशंसा कभी न करता।"

राजा भी जान गया कि बुढ़िया जो कह रही थी, वह सच ही था। उसकी बुद्धिमत्ता पर राजा को अचरज हुआ।

अगले दिन उसने तीनों भाइयों को बुलवाया।

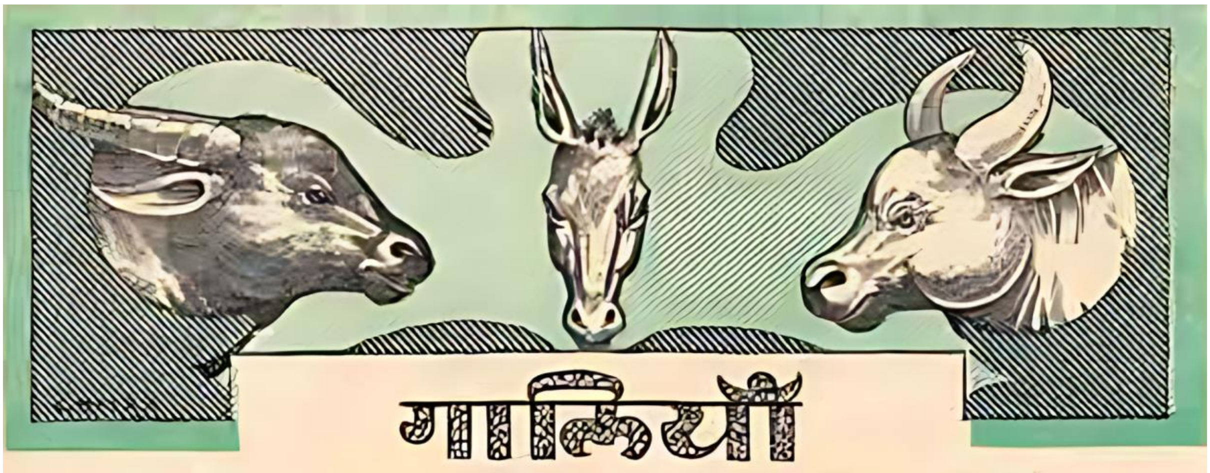
"तिजोरी में रखे दो रत्नों को दोनों बड़े भाई ले सकते हैं। यही मेरा फ़ैसला है।" राजा ने कहा।

तीसरा भाई दोनों बड़े भाइयों का मुँह न देख सका। उसने सिर नीचा कर लिया। राजा के फैसले का उसने विरोध भी न किया।

बाद में तीनों भाई घर चले गये। पिता की दुसरी सम्पत्ति को भी उन्होंने आपस में बराबर बराबर बाँट लिया।

उन्होंने कभी आपस में यह न कहा कि किसने रत्न चुराया था। सब के सब मिल-जुलकर सुखपूर्वक रहने लगे।





एक बैल, भैंसा और गधा, किसी चरागाह में मिले, और आपस में गप्पे मारने लगे।

"मैं ताकतवर जानवर हूँ। मेरे कारण ही मनुष्य खेती कर अनाज पाते हैं। मुझे किसान बहुत चाव से देखते हैं। अगर मैं न रहूँ तो संसार ही न रहे। परन्तु बेअक्ल लोग मेरा नाम गाली के रूप में उपयोग करते हैं। जब कोई किसी दूसरे को मेरे नाम से गाली देता है, तो मेरा पारा चढ़ जाता है।" बैल ने कहा।

"तब मेरे तो कहने ही क्या? कोई ऐसा काम नहीं, जो में नहीं करता। स्वभाव का साधु हूँ। मेरे कारण किसी को कोई इल्लत नहीं, दिक्कत नहीं। मैं गरीब किसान के लिये तो खजाना ही हूँ। मेरे मरने पर भी वे मेरी खाल को पैरो में पहने फिरते हैं। मैं किसी का भी बुरा नहीं करता। फिर भी जब लोग मेरे नाम से गाली देते हैं, तो आप ही बताइये, मेरी हालत क्या होगी।" भैंसे ने कहा।

"सहन शक्ति के लिये तो मेरा नाम लेना चाहिये। भारी से भारी बोझ को ढोता हूँ। परन्तु मै मालिक के लिये कोई भार नहीं हूँ। गाँव भर घूमता हूँ। जहाँ कुछ खाने को मिलता है, वहीं खा लेता हूँ। बारिश होती है, तो जहाँ कहीं जगह मिलती है, जा खड़ा होता हूँ। मेरी वजह से मेरे मालिक को कोई भी कष्ट नहीं होता। फिर भी मेरे नाम को ये मनुष्य बड़े बुरे ढङ्ग से बरतते हैं। मैं किसके पास जाकर अपना दुखड़ा रोऊ?" गधे ने कहा।

"हमें अब इस अन्याय को बर्दाश्त नहीं करना चाहिये। हमें कुछ न कुछ करना ही चाहिये।" भैंसे ने कहा। बैल

हरिनारायण सिगल

और गधे ने स्वीकृति में अपने सिर हिलाये।

"हमें ब्रह्मा से कहकर इस अन्याय को बन्द करवाना चाहिये।" भैंसे ने सलाह दी।

तीनों मिलकर ब्रह्मा के पास गये।

"क्यों, इस तरफ कैसे आना हुआ?" ब्रह्मा ने पूछा।

"ब्रह्मदेव ! हम पर मनुष्य बहुत अन्याय कर रहे हैं। हमें स्वयं अपनी प्रशंसा तो नहीं करनी चाहिये; पर वैसे हम कोई ऐर-गैरे नत्थू खैर नहीं है। शिव जी का वाहन नन्दीश्वर मेरे वंश का ही है। यम का वाहन भैंसा है। गधे के बारे में तो अलग कहने की जरूरत ही नहीं। विष्णु के अवतार श्री कृष्ण के पिता वसुदेव ने भी गधे के पाँव पकड़े थे।" बैल ने कहा।

"तुम्हारे पूर्वज तो जरूर बड़े हैं। क्या मैं यह नहीं जानता? पर मुझे यह नहीं मालूम हुआ कि तुम पर मनुष्य क्या अन्याय कर रहे हैं?" ब्रह्मदेव ने पूछा।

"हमारे पवित्र नामों को वे गाली के रूप में उपयोग कर रहे हैं। आपको चाहिये कि मनुष्यों से कहें कि वे हमारा समुचित आदर किया करें।" तीनों ने कहा।

ब्रह्मदेव ने मुस्कराते हुये कहा-"यह तो मनुष्यों की गलती नहीं है। तुम्हारी बेअक्ली के कारण ही उनका तुम लोगों के प्रति आदर चला गया है। तुम ही अपने को बदलो।"

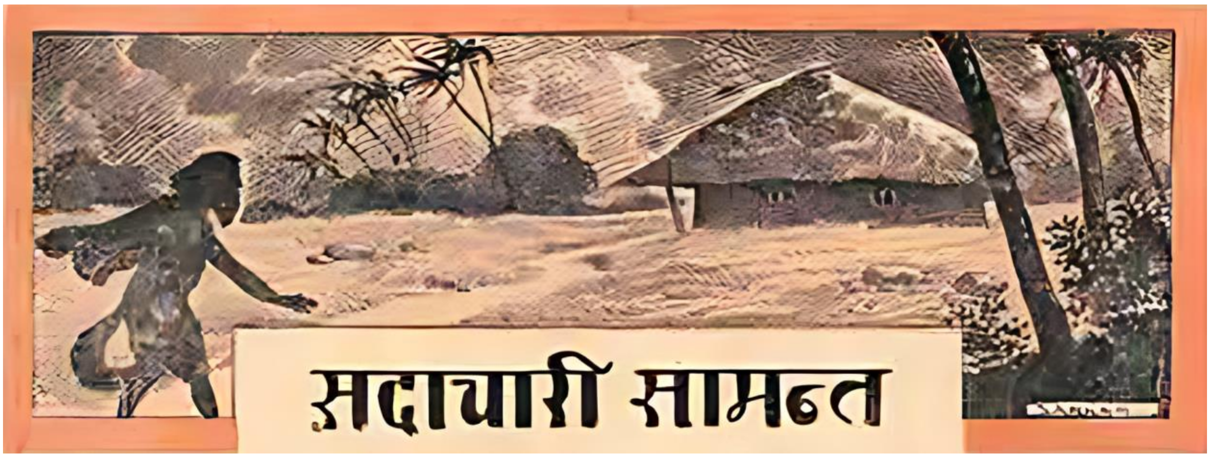
तीनों जानवर घर की और चले।

"इस 'भैंसे' को मनुष्यों से पक्षपात है।" गधे ने कहा।

"जो हमने कहा, वह तो सुना नहीं, और कुछ का कुछ कह दिया, 'बैल' कहीं का।" भैंसे ने कहा।

"उस 'गधे' के पास जाकर शिकायत करना ही गलती थी।" बैल ने कहा।





सदाचारी सामन्त

पहिले कभी सर्वजित नाम का राजा अयोध्या का परिपालन किया करता था। सर्वजित को जवानी में ही भोगविलास से विरक्ति हो गई। वह अपने बड़े लड़के को राज्य सौंप स्वयं जङ्गल में तपस्या करने के लिये चला गया।

दो वर्ष बीत गये। एक बार जब सर्वजित बहुत दूर जाकर आश्रम वापिस आ रहा था, तो एक बड़ा तूफान आया। दिन में ही जङ्गल में अन्धेरा छा गया। उस अन्धेरे में वह रास्ता भूल गया और इधर-उधर मटकने लगा। एक झोंपड़े के पास पहुँचकर उसके किवाड़ खटखटाये।

उस झोंपड़े में सुमन्त नाम का कोई व्यक्ति अपनी पत्नी के साथ रह रहा था। सुमन्त ने किवाड़ खोलकर सर्वजित को अन्दर निमन्त्रित किया। अतिथि को पहनने के लिये सूखे कपड़े दिये। सर्वजित ने कहा-"मुझे बड़े ज़ोर से भूख लग रही है। सवेरे से कुछ खाया नहीं है। कम से कम थोड़ी सी माण्ड ही पिलाइये।

"जल्दी ही खाना तैयार कर देती हूँ। आप जरा आराम कीजिये।" कह सुमन्त की पत्नी ने उसके कान में कुछ कहा। सुमन्त बगलवाले कमरे में गया। सर्वजित को थोड़ी देर बाद सुनाई दिया कि वह लकड़ियाँ तोड़ रहा था। फिर थोड़ी देर बाद, सुरन्त को रसोई घर में लकड़ियाँ ले जाते हुये देखा। वहाँ उसकी पत्नी ने चूल्हा जलाकर खाना पकाना शुरू कर दिया था।

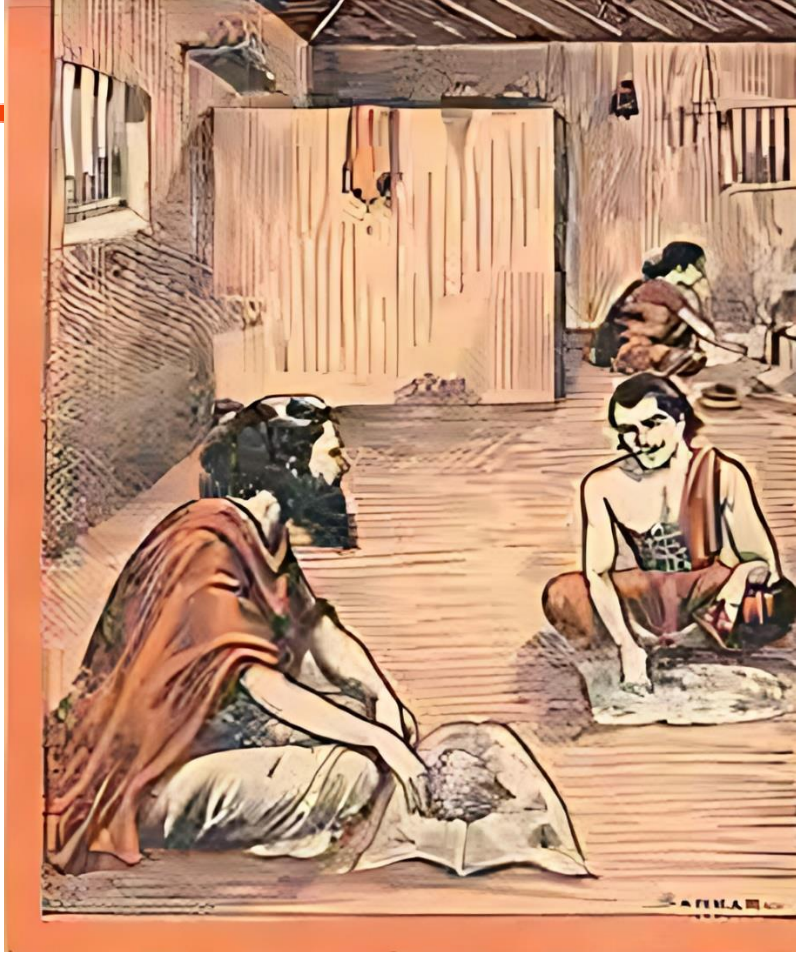
चूल्हे के जलते ही सर्वजित को चन्दन की लकड़ी के जलने की सुगन्ध आने लगी। हाथ सेंकने के बहाने वह चूल्हे के पास गया। सुमन्त की पत्नी चन्दन की लकड़ियों पर खाना तैयार कर रही थी।

सम्पतमल सुराणा

"कभी इन लोगों ने जरूर अच्छे दिन देखे हैं। इसी कारण चन्दन की लकड़ी की बनी चीजें अब भी हैं। मगर यहाँ ऐसी स्थिति में, जब उनके पास जलाने के लिये ईन्धन भी नहीं हैं, तो ये क्यों रह रहे हैं?" यह सोचकर सर्वजित आश्चर्य करने लगा।

थोड़ी देर में सुमन्त की पत्नी ने भोजन तैयार कर अतिथि और पति को परोसा। "बेटा, तुम और तुम्हारी पत्नी, लगता है, किसी अच्छे खानदान में पैदा हुये हो। तुम्हारे जङ्गल में रहने का क्या कारण है?" सर्वजित ने पूछा।

सुमन्त के मुख से आह निकली। वह कहने लगा-"स्वामी सम्पत्ति शाश्वत नहीं होती। कुछ दिनों पहिले में एक सामन्त था। मेरे शत्रुओं ने राजा की खुशामद कर मुझे अपने ओहदे से हटवा दिया है। पर मेरा बिगड़ा ही क्या है? मेरी पत्नी ही मेरे लिये कामधेनु की तरह है। जङ्गल में हमें खाने-पीने के लिये कुछ न कुछ मिल ही जाता है। यहाँ रहते हुये भी देश के लिये अपने प्राण अर्पित कर सकता हूँ। मैं हमेशा के लिये सामन्त हूँ।"



"राजा के पास जाकर तुम क्यों नहीं फैसला करवा लेते?" सर्वजित ने पूछा।

"न्याय और अन्याय को जाननेवाले राजा ने तो अब वानप्रस्थ ले लिया है। उनके साथ ही इस राज्य का न्याय भी चला गया है।" सुमन्त ने बताया।

सर्वजित ने रात वहीं काटी और सवेरे उनसे बिदा लेकर वह चला गया। कुछ समय बीत गया।

राज्य भर में ढिँढोरा पिटवाया गया कि सब सामन्त तुरन्त अयोध्या पहुँचे। दूर दूर से सामन्त अयोध्या पहुँचने लगे। कोई पालकी

में आया; कोई हाथी पर और कोई घोड़े पर। पर इन सामन्तों में एक सामन्त को देखकर हँसी आती थी। उसके कपड़े चीथड़े हो गये थे। हाथ में एक जङ्ग लगी पुरानी तलवार थी। वह पैदल ही अयोध्या चला आया था। वह भी सामन्त था।

राज-सेवकों ने सुमन्त को ढूँढ-ढाँढ कर उससे कहा-"महाराज ने आपको बुलाया है।" भरे दरबार में, सर्वजित को राजसिंहासन पर बैठा देख वह आश्चर्य में पड़ गया। परन्तु वह यह न जान पाया कि वह वही व्यक्ति था, जो उसके झोंपड़े में आया था।

"जब सब सामन्त अपने पद के उपयुक्त पोशाक में शान के साथ आये हैं, तो तुम्हारे इस बेष में आने का क्या कारण है?" सर्वजित ने पूछा।

"क्षमा कीजिये महाप्रभू! मैं सामन्त तो हूँ, पर सम्पन्न नहीं हूँ। मैं देश की सेवा करने के लिये आया हूँ, न कि अपने ओहदे का आडम्बर दिखाने।" सुमन्त ने कहा।

वह जवाब सुन राजा सर्वजित बहुत सन्तुष्ट हुआ। झट उसने सुमन्त के साथ जो अन्याय हुआ था, ठीक किया, और उसको कई नई जागीरें भी दी।

"उस दिन जब मैंने झोंपड़े में तुम्हारा हाल सुना, तो मुझे लगा कि मैंने अपने कर्तव्य को छोड़ दिया है। तुरन्त वापिस आकर मैंने अपने बड़े लड़के को सिंहासन से हटा दिया। अब मैं अपने दूसरे लड़के का पट्टाभिषेक कराना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम ही स्वयं उसको आवश्यक प्रशिक्षा दो।" सर्वजित ने सुमन्त से निवेदन किया।

सुरन्त अपनी पत्नी के साथ अयोध्या में रहने लगा और सर्वजित के दूसरे लड़के को राजा के कर्तव्यों के बारे में शिक्षा देने लगा।





रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ४